सूची



नवयुवक हृदय, समाजसेवी

श्रीगोवर्धनदास जी बिन्नाणी

के करकमलों में सप्रेम समर्पित

समर्पणम्

देशजाति समाज सेवामें सदा संलग्न हैं,

बन्धुओं के प्रेमपारावार में संमग्न हैं ॥

भारतीयादर्श में बिम्बित पवित्र विचार है,

सभ्यता-सँस्कृति सुमन सुषमा सुभग शृंगार हैं ॥

(२)

क्या विषमता अब रहेगी, शान्त समताराज हो।

रूढियों से मुक्त मौक्तिक रूप सर्व समाज हो ॥

पादपों से खिलए लतिकाएँ, मनोरम लास हो।

चेतना आनन्द हो; मधु माधवी का हास हो ॥

(३)

त्यागमय हो साधना पल पल बनें गतिमान् हम,

धर्म के आलोक में ध्रुव से बनें द्युतिमान् हम।

प्रेरणामय-रश्मिरंजित सौम्य स्वर्णिम प्रात हो,

मन्द मलयज से विनर्तित मुदित मन-जलजात हो ॥

(४)

एकता दृढता हमारी बन्धुता श्रमशीलता,

रूढियों के सामने करने न पावें दीनता।

स्वार्थ का हो त्याग, समता भाव परमोदार हो,

"मित्रता" की अर्चना में भेंट यह स्वीकार हो ॥

विट्ठलदास कोठारी

नम्र निवेदन

जिस प्रकार उपजाऊ खेतों में सुन्दर सुन्दर पौधों के बीच बीच में घास एवं गुल्म भी उग जाते हैं, जो पौधों को हानि पहुँचाते हुए खेत की उर्वरा-शक्ति को भी न्यून कर देते हैं, उसी प्रकार सुन्दर समाज की अनेक धार्मिक प्रथाओं के सहारे अन्धरूढ़ियाँ भी पनपने लगती हैं, जो सारे समाज के पावन कार्यों में बाधक और हानिप्रद सिद्ध होती हैं।

इन विकृत रूढ़ियों में वर्तमान दहेज प्रथाने भी एक विकराल रूप धारण कर रखा है, जिसकी विभीषिका आज समस्त समाज के लिए असह्य हो रही है। इसके दुष्प्रभाव से सर्वत्र "त्राहि त्राहि" की क्रन्दनध्वनि सुनाई दे रही है। इस विकृत प्रथा पर प्रकाश डालते हुए इम प्रस्तुत "दहेज" में तीन एकांकी नाटकों का समावेश किया गया है, जिनमें वर्तमान दहेज से क्या क्या दुष्परिणाम निकलते हैं? इनका शमन कैसे किया जा सकता है? और इसका वास्तविक स्वरूप क्या है? इन दृष्टिकोणों को समुपस्थापित किया गया है।

आशा है इससे समाज में प्रसृत विकृत रूढ़ियों का उन्मूलन होगा, और हमारा समाज अपना आदर्श गौरवास्पद पद पुनः प्राप्त कर सकेगा।

समाज सेवी परमोदार परममित्र गोवर्धनदास जी बिन्नानी की सेवा में इसे उनकी गुणगरिमा से आकृष्ट होकर सादर समर्पित करते अपने प्रयास को सफल साकार रूप में विकसित होते देख कर परम सन्तोष का अनुभव कर रहा हूँ।

आचार्य श्री चन्द्रमौलिजी एवं ईश्वरानन्द जी शास्त्री ने इस पुस्तक को परमोपयोगी बनाने में जो सहयोग दिया है, इसके लिए मैं आप महानु भावों का चिर आभारी रहूँगा।

गोपाष्टमी २०११ — विट्ठलदास कोठारी

सम्बन्ध

पात्र-परिचय

महेशदास— निर्धन, भद्र, कन्या का पिता

शान्ति—वयस्का, महेशदास की पुत्री, हुतात्मा

ज्वालादत्त— सफल चिकित्सक, प्रवचनपटु, महेशदास का मित्र

गंगाधर— धनी, स्वार्थी, वर का पिता

दमडीलाल— भेदक, लोभी, अवसरवादी

रक्षकदलनायक, प्रभृति

प्रथम दृश्य

स्थान—महेश दास का मकान

समय—प्रात काल

[संसार के समस्त प्राणियों को विपदा-सम्पदा की अधीनता मे जीवन-यापन करना पडता है। यदि सम्पदा कल-कल निनादिनी शीतल मंदाकिनी है, तो विपदा विशाल भीषण ज्वालामुखी पहाडी है। सम्पदा-रासमंडल की शारद पूर्णिमा है, तो विपदा महातमिस्रावती अमावस्या है। सम्पदा सदासुहागिनी की कलित सीमत की कु कुम कलरेखा है, तो विपदा वैधव्य के बिखरे केशकलापों में छिपी भीगी पलको के अरविंदों की उष्णबिंदु है। सम्पदा का स्वरूप विजय, और विपदा का विकराल पराजय है। विपदा के मग मे पग-पग पर ऊँची पहाडियाँ मिलती हैं, क्षण क्षण मे कण्टकाकीर्ण गुल्मनिचय पथ रोके खडे रहते हैं। विपदा देवी के सम्मुख चक्रवर्ती, सत्यव्रती, यज्ञव्रती हाथ बाँधकर नतमस्तक हो जाते हैं। जिन शहशाहों के राजदरबार कलारत्ननरो से प्रकाशित एव विभूषित थे आज वहाँ कोई दीप सँजोने वाला नहीं है। अहर्निश जहाँ कलाभिज्ञो द्वारा प्रशंसात्मक मगलगान गाये जाते थे, वहाँ कोई रोने वाला तक नहीं है। वसुयाम जहाँ मधुरी नौबत बजती थी, छत्तीसों रागों के सुमधुर आलाप सुनाई पडते थे, वे प्रासाद विध्वस्त हो, शून्य भग्नावशेष के रूप मे भय उत्पन्न कर रहे हैं। विपदा के हस्तस्पर्श से कंचन भी मृत्तिका में परिणत हो जाता है। अनर्घ मणि माणिक्य भी कृष्णाङ्गार बन जाते हैं। जो उत्तमाङ्ग मुकुटमण्डित थे, वे धूलिधूसरित गोचर होते हैं। विपदा के कृपाकटाक्ष से प्रियजन भी जीवन शत्रु बन जाते हैं। विपदा की झोली में दाता की भीख भी राख बन जाती है। उसके गहन अंधकार मे

मारे सद्गुण पत्ती निद्रित हो जाते हैं, किंतु अवगुण उलूक "या निशा-सर्वभूतानाम् तस्या जागर्ति संयमी" को चरितार्थ करते हैं। उससे आहत प्राणी जीवित भी शव समान अकर्मण्य श्रीहत भयोत्पादक जान पड़ता है। उसके निखिल विचार तीर्थप्रेतशिला का स्वरूप धारण कर लेते हैं।

विपदा चक्रावर्त पतित मानव भावना को महातामिस्र रजनी में कल्पना के सहस्रकरों से सफलता रत्नों के अन्वेषण की चेष्टा करता है, किंतु छाया में रत्नों की जगह पाषाणखण्ड प्राप्त होते हैं। उन्नत स्थानाप्ति की जगह गर्तपतन,एवं आहत आघातों से स्वागत होता है। उसे पददलित, प्रतिपल पतित, पराजित, भग्नहृदय होकर निराशा का पादोपसवाह स्वीकार करना पडता है।

बडवाहा निवासी वेदपाठी महेशदास शास्त्री आयु ४० वर्ष, जीर्ण रोग कास श्वास पीडित, दुर्धर्ष नियति—चक्रपरिचालित विपदा के सम्मुख पराजित होकर किराये के साधारण मकान के कमरे में पुरानी टूटी फूटी खाट पर लेटे हुए हैं। उनके पास ही उनकी पुत्री शांति आयु २० वर्ष जमीन पर बैठी हुई पखा झल रही है। जब शांति तीन वर्ष की थी,उसे मातृ वियोग का दुसह दुःख उठाना पडा था। मातृविहीना शांति का लालन-पालन एवं शिक्षा की सारी व्यवस्था महेशदास को माता बनकर करनी पडी थी। आज शांति देखते देखते कली की मानिंद पूर्ण वयस्का हो चली है]

महेश—बेटी। आज मेरी तबीयत अधिक बेचैन मालूम पड़ती है।

शांति—(मंद स्वर में) क्यों पिताजी। ऐसी क्या बात है?

महेश—(निराशा से) कुछ भी समझ में नहीं आता।

शांति—औषध-सेवन तो नियम पूर्वक हो रहा है, पथ्य के क्रम में कोई व्यतिक्रम नहीं हुआ; फिर इस बेचैनी का कारण?

महेश—अन्त:करण की शाति आज अशान्ति के महोदधि में निमग्न हो रही है।

शांति—परिचर्यात्मक पथ्य सेवन में व्यतिक्रम भी नहीं है, फिर अशाति कैसी पिताजी ?

महेश—बेटी! सभी क्रम ठीक है, फिर भी चित्त से शाति कोसो दूर हो रही है। तुम अभी जाकर वैद्यराज से निवेदन करो, कि यदि वे उचित समझें तो, निर्दिष्ट औषध मे कुछ परिवर्तन करने का विचार करें।

शांति—जो आज्ञा।

(शाति वस्त्रोपवस्त्र परिवर्तित कर घर से बाहर निकलना ही चाहती है कि वैद्यराज ज्वालादत्त आते दिखाई पड़ते हैं। शाति नम्रता से "नमस्ते" करती है, और शिष्टाचार के साथ मकान के बाहर बराण्डे मे एक किनारे पड़ी काष्ठ की बेंच पर बैठने का आग्रह करती है। और उनके बैठने पर स्वय उसी बेंच के एक किनारे बैठ जाती है और वैद्य जी की ओर जिज्ञासु मुद्रा मे देखने लगती है।)

ज्वालादत्त—*शास्त्री जी का स्वास्थ्य कैसा है ?*

शाति—आज उन्हें अधिक बेचैनी है। आपकी सेवा में निवेदन करने को अभी उपस्थित हो रही थी। अगर आप उचित समझें तो निर्दिष्ट औषधि में कुछ परिवर्तन करने का विचार करें।

ज्वालादत्त—(सोचकर) रोग निदान के अनुसार औषध उपयुक्त चल रही है

शांति—(सरलता से) क्षमा करें! पिता जी फिर भी स्वस्थ नहीं हो रहे हैं!

ज्वालादत्त—धैर्य रखो जो औषधि उन्हे दी जा रही है वह अति उत्तम है। जो औषध आयुर्वेदिक पद्धति से अनुकूल शुभ तिथि नक्षत्र वार के विचार से बोई, उन्मूलित तथा बनाई जाती है, वह कभी निष्फल नहीं होती। आयुर्वेद मे ऐसा प्रमाण है—

शुभे मासे शुभे वारे शुभभे शुभसन्निधौ।
वापितम् औषध ज्ञेयम् सर्व रोग विनाशकम्॥

शाति—कुछ विशेष उपाय करना चाहिए। आज पिता जी अत्यन्त व्यग्र हैं। कष्टानुभूति चरमसीमा पर है।

ज्वालादत्त—शास्त्रोक्त औषधो पर विश्वास करना चाहिए। लिखा भी है.—

"चिकित्सा नास्ति निष्फला"।

अर्थात् चिकित्सा निष्फल नहीं होती। थोड़ी सावधानी से दवा सेवन से सब ठीक हो जायगा।

शांति—(आश्चर्य से) क्या सावधानी से दवा सेवन नहीं किया जा रहा है ?

ज्वालादत्त—ऐसा नहीं है। औषधि सेवन के साथ परहेज अत्यन्त आवश्यक होता है। उसका उसके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। आयुर्वेद में लिखा है—

पथ्ये सति गदार्तस्य किमौषधनिषेवणै।
पथ्येऽसति गदार्तस्य किमौषधनिषेवणै।

अर्थात् पथ्य से रहने पर रोगी के लिए औषध सेवन व्यर्थ है और पथ्य से न रहने पर भी औषध सेवन व्यर्थ है।

शाति—पथ्य! (कुछ ठहर कर) पथ्य न रखने का पिता जी पर कभी दोषारोपण हो ही नहीं सकता।

ज्वालादत्त—पुत्रि! अभी तुम नादान हो। परहेज की प्रक्रिया से अनभिज्ञ हो।

शांति —मैं आपको सब प्रकार से विश्राम दिला सकती हूँ आपकी आज्ञा बिना पिता जी पानी की एक बूँद भी मुख में नहीं डालते। नियत समय पर औषध पान कराने में मेरी भी तत्परता बराबर रहती है, फिर परहेज की शंका कैसी ?

ज्वालादत्त—यह कहावत तुम्हें याद नहीं —

"सौ दवा और एक हवा"

परहेज का लाभ परहेज से ही सम्भव है।

शांति—(आश्चर्य से) मैं परहेज की परिभाषा नहीं समझ सकी। आप कृपा कर मुझे अवगत करावें। परहेज का वास्तविक स्वरूप क्या है ?

ज्वालादत्त—औषध के कुसुम कानन में परहेज अमृत की वर्षा करता है। उसका वास्तविक स्वरूप —

हठयोग नहीं—सरल साधना है।

संशयात्मक बुद्धि नहीं—अटल विश्वास है।

अतुलित भव वैभव नहीं—सरल सादगी है।

दवा की देवी के भास्वर स्वर्ण सिंहासन पर परहेज स्वर्णच्छत्र है। जहाँ परहेज की प्रधानता है, सफलता सुमनोपहार सजाती है। दवा की प्रधानता में केवल आशा का बीजारोपण होता है।

शांति—नहीं समझ सकी। स्पष्टीकरण करने की कृपा करें।

ज्वालादत्त—परहेज के दो स्वरूप हैं-(१) शारीरिक (२) मानसिक। केवल शारीरिक परहेज रखना परहेज की पूरी साधना नहीं कही जा सकती, किन्तु मानसिक परहेज भी वहाँ परमोपादेय है। बिना परहेज रूपी समीर के दवा के सुगन्धित सुमन अपना सौरभ प्रसार नहीं कर सकते।

शांति—मैं आपके गूढ़ार्थ, गुप्तार्थ गूढगुप्तार्थ को समझने में असमर्थ हो रही हूँ।

ज्वालादत्त—अनुभव विहीन मनुष्यो को मानसिक व्यथाओ का पता लगाना कठिन होता है।

शांति—पिताजी को मानसिक चिन्ता क्या हो सकती है ? उनकी मानसिक चिन्ताओ को दूर करने के लिए प्राणपण से चेष्टा करूँगी।

ज्वालादत्त—मानसिक चिन्ता मनुष्य के सुख शाति उमङ्ग आसव का पान कर तरङ्गित होती रहती है। मानसिक दुःखो की श्यामल घटा में चिन्ता दामिनी क्षण-क्षण में कड़क कड़क कर चमकती है। घोर अंधकार में भी उसका स्पन्दन अवरुद्ध नहीं होता। तुम्हारे पिता जी भी चिन्ताचिता पर शयन कर रहे हैं। निराशा के कदुष्ण आसुओ से हृदय के गहरे घावो को धो रहे हैं। उनके मानस शरीर की सिकुड़ी नाड़ियो मे बरसाती नालों के समान चिन्तातुर भावों का स्रोत वह रहा है।

शाति—मैं आपका आजन्म उपकार न भूलूगी। आप अवश्य बतावें कि पिता जी को किस अभाव की चिन्ता हो सकती है।

ज्वालादत्त—हमारा सम्बन्ध वश परम्परानुगत है। आज तुम्हें उषा पर परहेज का वास्तविक स्वरूप बताना पड रहा है। (मंद स्वर में) तुम्हारे पिता एक प्रतिष्ठित कुल के मुखिया हैं। तुम वयस्क हो गई हो। कोई सत्पात्र सुयोग्य तुम्हारे कुसुमकरो में सुहाग का शुभ कंकण पहनावे" यही उनकी मानसिक चिन्ता है। इस विषय के अनेक प्रस्ताव हुए किन्तु दहेज के अभाव में कोई पारित नहीं हुआ।

आज दहेज के सम्मुख परहेज की पराजय हो रही है।

[कुछ क्षण मौन के पश्चात्] अच्छा चलो उनकी स्वास्थ्य परीक्षा तो करें।

[दोनों महेशदास के पास जाते हैं। वैद्यराज नाडी परीक्षण करते हैं। शान्ति म्लानमुद्रा में उनकी मुखाकृति की ओर निर्निमेष देख रही है]

(पटाक्षेप)



दूसरा दृश्य

स्थान—गंगाधर राजज्योतिषी का मकान

समय—मध्याह्न

[सच है "अर्थी दोष न पश्यति" संसार में ऐसे व्यक्तियों की संख्या नगण्य है जो स्वार्थ और लोभ से प्रेम न करते हों, लोभी को जितनी अधिक प्राप्ति होती है; उतनी ही उसकी तृष्णा बढ़ती जाती है।

यथा "लाभाल्लोभ प्रजायते"। लोभी की आँखें पाप, अपराध और किसी की उजड़ती दुनिया पर तरस नहीं खातीं वे सदैव असत्य को सत्य का घर बना कर समाज को धोखा देना चाहती हैं। सत्यचंद्र को नीलाकाश में स्वार्थ की आंधी से समाच्छन्न करने का असफल प्रयत्न करती हैं।

गंगाधर ने दहेज के ठहराव होने पर ही महेशदास की इकलौती कन्या शान्ति का सम्बंध अपने पुत्र रसिकविहारी उम्र २४ वर्ष के साथ स्वीकार कर लिया है। तीन दिन के पश्चात् ही गंगाधर को बरात लेकर महेशदास के द्वार पर जाना है, जिसके लिए वे अपने कार्यालय में कुंकुम पत्रिका प्रेषण की व्यवस्था में व्यस्त हैं। किसी के बाहर आने की सूचना से वे बाहर आते हैं और किसी आगंतुक को देख कर उसे कार्यालय में आने का संकेत करते हैं। दोनों गद्दी पर बिछी सतरंगीपर बैठ कर वार्तालाप आरम्भ करते हैं।]

गंगाधर—आपका शुभ नाम। तथा परिचय।

आगन्तुक—मुझे दमड़ी कहते हैं। मैं केशवदास जी के भेजने पर यहां आया हूं जो महेशदास के निकटस्थ बान्धव हैं?

गंगाधर—हां! मैं केशवदास जी को जानता हूं। कहिए क्या सेवा करूँ?

दमड़ी—कोई विशेष बात तो है नहीं। केवल आपकी सेवा में एक प्रस्ताव लेकर उपस्थित हुआ हूँ।

गंगाधर—कहिये क्या प्रस्ताव है।

दमड़ी—प्रस्ताव तो साधारण सा है।

गंगाधर—बड़ी प्रसन्नता की बात होगी। निस्संकोच कहें ?

दमड़ी—आपके सुपुत्र श्रीरसिक विहारी के विवाह सम्बन्ध का शुभ प्रस्ताव लाया हूं।

गंगाधर—क्षमा करें। आपको मालूम होना चाहिए। सम्बन्ध तो महेशदास जी की सुकन्या से निश्चित होगया है।

दमड़ी—यह मुझे भी अवगत है।

गंगाधर—फिर।

दमड़ी—आपकी सेवा में सुझाव एवं अनुरोध है कि केशवदास जी की सुपुत्री के साथ यह सम्बन्ध होता तो सोना और सुगन्ध की कहावत चरितार्थ होती।

गंगाधर—यह अब कैसे हो सकता है ? मुख से निकले हुए शब्द वापस नही होते।

दमड़ी—संसार में प्रयत्न करने से सब कुछ असम्भव भी सम्भव हो जाता है।

गंगाधर—नहीं। आकाश में प्रकाशित बालचन्द्र को पृथ्वी पर खड़ा मनुष्य अपनी भुजाओं में नहीं बांध सकता ? सम्बन्ध निश्चित हो जाने पर अब यह आपका प्रस्ताव विशेष महत्व नहीं रखता।

दमड़ी—आपका कथन सत्य है। किन्तु मेरा अभिप्राय साकूत है।

गंगाधर—वह क्या ?

दमड़ी—महेशदास के यहाँ सम्बन्ध से आपको भविष्य में अनेक कठिना-

इयो का सामना करना पडेगा।

गगाधर—सो कैसे ?

दमडी—जिन घरो मे स्त्रियाँ नहीं होती उन घरो की कन्याओ के साथ सम्बन्ध सम्पन्न हो जाने पर सामाजिक रीति रिवाजो में सदा अपूर्णता ही बनी रहती है कारण यह है कि पुरुष समाज उनसे पूर्ण अभिज्ञ नहीं होता।

गगाधर—यह ठीक है, किन्तु क्या ये आदर्श आपके ध्यान में नहीं है ?

सिंह भोग, सुपुरुष वचन,
केलि फलै इक डार।
तिरिया तेल, हमीर हठ
चढ़े न दूजी बार।

अब तेल चढ़ी कन्या के विषय में कोई अन्य विचार क्या कर सकता है।

दमडी—महेशदास सदैव रुग्ण रहते हैं, उनकी स्थिति भी अच्छी नहीं है उनके उत्तराधिकारी भी उनके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है। इसके अतिरिक्त आप के साथ समता भी तो नहीं मिलती। शास्त्रो का वचन है.—

ययोरेव समं वित्तं ययोरेव समं कुलम्।
तयोर्विवाह सख्यञ्च नतु पुष्टविपुष्टयो.।

जिनकी धन सम्पत्ति तथा वश समान हो उनको ही परस्पर विवाह सम्बन्ध सूत्र में बद्ध होना चाहिए।

गगाधर—(मंद स्वर मे) 'हरेरिच्छा बलीयसी"

दमडी—केशवदास जी एक पुरुषरत्न है उनका हृदय विशाल है। बडे भाग्यशाली हैं। इस समय व्यापार में उनका सितारा चमक रहा है। उनकी इकलौती पुत्री ही अतुल सम्पत्ति की एकमात्र उत्तराधिकारिणी है।

गंगाधर—क्या उनकी एक ही सन्तान है ?

दमड़ी— इकलौती पुत्री पर उनका अपार स्नेह है। अहर्निश बेटी रम्भा कह कह कर मोद भरते रहते है।

गंगाधर—भाई ! आप अधिक विलम्ब से आये।

दमड़ी—आपके मनोनीत दहेज से वे कई गुना अधिक दहेज भी देंगे। नकदी, कीमती वस्त्र, बहुमूल्य आभूषणों के साथ भूमिदान, गोदान आदि से सवलित कन्यादान करेंगे।

गंगाधर - इस विषय मे बुद्धि काम नहीं देती।

दमड़ी—टीकों मे शत-स्वर्ण-मुद्रोपहार का विचार है। दहेज मे कई वर्षो से सजाई हुई अनेक बहुमूल्य वस्तुएँ प्राप्त होंगी। आपके अतिरिक्त आदेश भी शिरोधार्य करने मे वे अपने को अहोभाग्य समझेंगे। केवल आपको इसी शुभ लग्न पर बारात से उनके द्वार की शोभा बढानी पड़ेगी।

गंगाधर—महान धर्म संकट उपस्थित होगया है ? सम्बन्ध त्याग की कोई युक्ति दृष्टिगोचर भी तो नही होती।

दमड़ी—इस नवयुग मे आप पुरातन जीर्ण शीर्ण रूढ़ियों का पल्ला न पकड़ें। शास्त्रों मे तो यहाँ तक कह डाला गया है कि तैल चढे की तो कौन कहे तृतीय प्रदक्षिणा करने पर भी कन्या कुमारी ही रहती है —जैसा लिखा है —

'यावत कन्या न वामाङ्गे तावत कन्या कुमारिका"

वैवाहिक कृत्य सम्पन्न होने पर भी जब तक कन्या पति के वामाङ्ग नहीं आती तब तक कुमारी ही रहती है। आज आजादी के युग मे विवाह होने पर भी पति पत्नी का सम्बन्ध विच्छेद हो सकता है फिर

कुछ विचारणीय विषय रह ही नहीं जाता। आप पूर्ण विश्वास करें। महेशदास के द्वार पर केवल कुंकुम कन्या है, और केशव के घर पर आप की अभिलाषा के सम्मुख समधी की इच्छा हाथ जोड़े खड़ी है।

गंगाधर—कथन तर्कसंगत है, किन्तु प्रबल अकाट्य युक्ति तो अभी तक समझ में नहीं आई।

दमड़ी—आपने उसके विषय में सतर्कता से सोचा ही कब है।

गंगाधर—महेशदास को दिया वचन जो अवरोधक बना हुआ है।

दमड़ी—यह हृदय की दुर्बलता है।

गंगाधर—किया ही क्या जा सकता है ?

दमड़ी—(सोचकर) युक्ति तो बड़ी सरल है, यदि आपको पसन्द आवे।

गंगाधर—अपने हित अनहित की पहचान तो पशु भी रखते हैं ?

दमड़ी—रसिकविहारी की ओट में आप चाहें तो अपने सकल मनोरथ पूर्ण कर सकते हैं।

गंगाधर— कैसे ?

दमड़ी—आप महेशदास को तुरन्त सन्देश भेज दें कि बहुत समझाने बुझाने पर भी रसिक विहारी को यह सम्बन्ध स्वीकृत नहीं है। इसलिए विवश हो यह सूचित करना पड़ता है कि नियत मुहुर्त्त पर हम आपके यहाँ बारात लाने में असमर्थ हैं। इस सम्बन्ध विच्छेद में नियति चक्र ही कारण है।

गंगाधर—युक्ति वास्तव में सरल, प्रबल, अकाट्य है, किन्तु आगन्तुक अप्रत्याशित बाधाओं के लिए क्या होगा।

दमड़ी—आप निश्चिन्त रहें। मैं सब ठीक कर लूँगा (कान मे कुछ कहता है)

गगाधर—मुझे केशवदास की सुपुत्री भाग्यशालिनी कन्या का सम्बन्ध सहर्ष स्वीकार है। यह शुभ सन्देश उन्हें आप शीघ्रातिशीघ्र पहुँचा दें।

दमडी—मुझे आपसे ऐसी आशा थी आपकी दूरदर्शिता के लिए अनेकश धन्यवाद।

(दमडीलाल "नमस्ते" करके प्रयाण करता है। गगाधर महेशदास को पत्र लिख कर अपने कर्मचारी के द्वारा भेज देते है। कुकुम पत्री को परिवर्तित कर कार्यालय कर्मचारियों के निर्देश म तल्लीन हो जाते हैं। नये सिरे से निमन्त्रण-पत्र वितरित होने लगते है)

(पटाक्षेप)



तीसरा दृश्य

स्थान—महेशदास का मकान

समय—सायंकाल

[महेशदास के घर मे बडी चहल पहल है। ज्योतिषी गंगाधर के सुपुत्र रसिकबिहारी के साथ शान्ति का सम्बन्ध निश्चित हो चुका है। सम्बध (वाग्दान) के पश्चात् सारे आवश्यक माङ्गलिक वैवाहिक कार्य आज सम्पन्न हो रहे हैं। गंगाधर के यहाँ से आये हुए सुन्दर वस्त्र तथा मौक्तिक माला पहन कर शांति मन ही मन बडी प्रसन्न हो रही है। वह गन्धर्व कुमारी त्रिभुवन सुंदरी सी मालूम पडती है। उसके अनिंद्य सौन्दर्य को देख कर महेशदास का मानस अनेक काल्पनिक आशंकाओं से लहरा उठता है - वह दीपशिखा का आवसानिक प्रकाश तो नहीं है ? कभी कभी नीति वाक्य स्वतः प्रस्फुटित हो उठते हैं —

"अतिरूपात् हृता सीता
अतिगर्वेण रावण.
अतिदानाद्बलिर्बद्धो
ह्यतिसर्वत्र वर्जयेत् ।

कभी अतीत की मधुर स्मृतियों की धाराएँ प्रवाहित हो जाती हैं। "आज शांति की माँ विद्यमान होती तो फूली न समाती"। मातृविहीना कन्या का परिणय क्या सूना नहीं होता ?

महेशदास का स्वास्थ्य सुधार पथ पर है। तीन दिन बाद आने वाली भागत की स्वागत सज्जा में उन्हें अनुपम शांति का अनुभव हो रहा है।

सभी परिजन यथाकार्य व्यस्त हैं। शान्ति महेशदास के चरणों की वंदना करती है]

महेश–सदा सुखी हो।

शांति—आपकी तबीयत कैसी है।

महेश—प्रभु सब अच्छा ही करते है। तुम्हें सुखी देख कर मैं अब पूर्ण स्वस्थ हो जाऊँगा। (मस्तक पर हस्तस्पर्श करते हुए) तुम जहाँ भी रहोगी। तुम्हारे गुण प्रकाशरूप में तुम्हारा जीवन-पथ आलोकित करते रहेगे। तुम अन्धकार में प्रकाश किरण सिद्ध होगी। (स्नेहाश्रु का उद्रेक होने लगता है)

(वैद्यराज ज्वालादत्त का प्रवेश। शांति कमरे से बाहर चली जाती है)

ज्वालादत्त –बधाई है ? बधाई है ?

महेश—यह सब आपके शुभाशीर्वाद का फल है।

ज्वालादत्त—यह सम्बन्ध मणिकाञ्चन का योग है।

महेश—आपका श्री गंगाधर जी से परिचय है ?

ज्वालादत्त—आज उन्हें गाँव मे कौन नही जानता। वैद्य नाड़ी देख कर ज्योतिषी जन्मपत्री अवलोकन कर सबसे परिचय कर लेते है।

महेश—उनके विषय में आपके क्या विचार है ?

ज्वालादत्त—एक समय श्री गंगाधर बड़े निर्धन थे, किन्तु आज उनके बालक सोने के पालनो में झूलते है। गाँव मे इनकी बड़ी ख्याति है। राजदरबार में अभूतपूर्व सम्मान है। प्रभु की लीला बड़ी विचित्र है। सम्पदा में मन्थर समीर भी शीतल मन्द सुगन्ध मलयज नदी का रूप धारण कर बहने लगती है। जिसमें मनुष्य सुख का नौका विहार किया करता है सम्पदा

निराशा की पावनरात्रि में आशा का विद्युत्संचार करती है। कंटकाकीर्ण पथ पर सुमन बिछाती है। प्रबल तीव्र धार में पतवार का काम करती है। इसकी महिमा अपार है यह शिर पर लकड़ी की भारी रखने वाले को नवरत्न खचित मुकुट परिधान करा देती है। जीवन-कसक भरे दुःखद गान में मीठी मनहर तान बन जाती है। बन्धन में भी स्वातन्त्र्यानुभव विभोर बना देती है।

महेश--सच है। जब जीवन में अच्छे दिन आते हैं। बात बनते देर नहीं लगती।

ज्वालादत्त--सम्पत्तिशाली की दुनियाँ निराली होती है। उसे समीर के समान समाज का कोई बन्धन नहीं रहता। सूर्य किरण सदृश उसके विचारों को कहीं प्रतिहत नहीं होना पड़ता। उसकी अग्नि प्रतिभ गति को कोई रज्जु से अवरुद्ध नहीं कर सकता। मनुष्य के जीवन सागर में ज्वारभाटे सदैव उठते रहते हैं किन्तु सम्पत्तिशाली सुदृढ़ जलयान पर सफल यात्राएँ सम्पन्न किया करता है।

महेश--यह सम्बन्ध बड़े ही परिश्रम करने पर निश्चित हुआ है। इससे बरातियों के अनुरूप स्वागत में हृदय खोल कर रख देना होगा।

ज्वालादत्त--अच्छा हुआ। आज आपके शिर का भार हलका हो गया। कहिये ? तबीयत कैसी है ?

महेश--अब स्वास्थ्य कुछ सुधार पर मालूम पड़ रहा है।

ज्वालादत्त--आप चन्द दिनों में पूर्ण स्वस्थ हो जायेंगे।

महेश--शान्ति आप ही की बेटी है। सारे वैवाहिक कृत्यों में आपको पूरा पूरा सहयोग देना होगा। आप लोगों के हार्दिक सहयोग एवं वरद

आशीर्वाद के बिना यह कार्य सुचारु रूप से कैसे सम्पन्न हो सकेगा ?

ज्वालादत्त—इसमें भी कहने की जरूरत है ? शान्ति तो हमारी ही पुत्री है। इसके विवाह के प्रत्येक कार्य में उपस्थित होकर सक्रिय सहयोग देना हमारा परम कर्त्तव्य है। आज इस परम पवित्र सम्बन्ध से सबको परम प्रसन्नता है। हम लोगों के रहते आपको विशेष चिन्ता नहीं करनी चाहिए।

महेश—मुझे आप लोगों का ही पूर्ण भरोसा है।

[वैद्यराज नमस्ते कर प्रस्थान करते हैं। कुछ क्षण बाद ही गंगाधर का एक कर्मचारी एक पत्र महेशदास को देता है, जिसे महेशदास पढ़ते हैं और व्यग्रता के साथ उस कर्मचारी के साथ गंगाधर के मकान पर जाने को उद्यत हो जाते हैं।]

(पटाक्षेप)



चतुर्थ दृश्य

स्थान—गंगाधर का मकान

समय—सायंकाल

[कर्मचारी के साथ महेशदास गंगाधर के मकान पर पहुँचते और सूचना देकर कार्यालय में प्रवेश करते हैं। गंगाधर कार्यालय में कार्यव्यस्त हैं।]

महेश—[अभिवादन के पश्चात्] मेरे आने का कारण तो आपको विदित ही है।

गंगाधर—[घबराये हुए से] मैं नहीं समझ सका ?

महेश—[पत्र देते हुए] मुझे विश्वास नहीं होता कि यह पत्र आपका लिखा हुआ है।

गंगाधर—[पत्र लौटाते हुए] यह पत्र मेरा नहीं है।

महेश—यह पत्र आपके नाम के शुभाक्षरों से अंकित है।

गंगाधर—[उदासीनता से] आपका कहना ठीक है। यह पत्र रसिक ने लिखकर भेजा है।

महेश—लिखने का कारण ?

गंगाधर—उस नादान को हमने अनेक तरह से समझाया। साम, दाम, दण्ड, विभेद नय के चारों रूप प्रयुक्त किये, लेकिन वह अभेद्य चट्टान के सदृश स्थिर है।

महेश—आपने वचन दिया था ?

गंगाधर—मैं कब अस्वीकार करता हूं। किन्तु उसने हठ के सम्मुख

विवश हूँ।

महेश—(वेदना से) आपके पत्र को पढ़ कर पत्थर भी पुकार किये बिना नहीं रह सकता।

गंगाधर—मेरे वश की बात नहीं?

महेश—(पसीना पोंछता हुआ) मेरी पुत्री ने हृदयहार में आपके भेजे हुए स्नेहसिक्त अनमोल मोती हैं, उन्हें न बिखेरें।

गंगाधर—मेरी शक्ति से बाहर की बात हो चुकी है मैं असमर्थ हूँ।

महेश—आपके कर्मचारी द्वारा सब बातें अवगत हो गई हैं। आप दहेज महाकालेश्वर पर मेरी कन्या के शोणित से प्रलयाभिषेक न करें। मानस क्षितिज पटल पर प्रलयकारी श्यामल घटाओं को न घुमड़ने दें। प्रतिज्ञा भूमि पर वचन उपवन की शोभा से पराङ्मुख होते हुए दहेज के इन्द्रजाल का तमाशा देखने में तल्लीन न हों।

गंगाधर—सम्भव है, आपको आशाएँ निराशा हों।

महेश—मेरी कन्या को आपकी शरण के अतिरिक्त कहाँ स्थान हो सकता है? निर्बल पर दया करने के समान कोई पुण्य नहीं है। मेरी कन्या आपके द्वार की ओर पलक पाँवड़े बिछा कर दया के आगमन की प्रतीक्षा कर रही है। यह शरणागिनी अवश्यमेव स्वीकार्य है। इस दयानुष्ठान से देवगण प्रसन्न होंगे। शुभाशीष देंगे। आपकी सारी मनोकामनाएँ पूर्ण होंगी।

गंगाधर—अब हो ही क्या सकता?

महेश—आपके करों में शस्त्र है? दण्ड है?? शक्ति है??? गरीब गाय पर न चलावें। सन्तान कभी माता पिता को पालन करने के लिए नहीं कहती। प्रजा कभी राजा से अभय याचना नहीं करती। पत्नी

कभी पति को रक्षा के लिए नहीं कहती, वैसे ही सज्जन लोग भी अपने वचनो की रक्षा किसी की प्रेरणा के विना ही करते हैं। यह कन्या मेरी दयनीय परिस्थितिवश आपकी कृपा की अभिलाषिणी शरण में पड़ी है, इस को समादृत करें।

गंगाधर—अब कोई अन्य युक्ति ही लाभप्रद हो सकती है।

महेश—ज्वालामुखी के मुख पर बैठ कर आश्वासन के आंसुओ से कोई शीतल नहीं हो सकता? मेरी वेदना प्रत्येक निश्वास से निकल रही है। करुणा सिसक सिसक कर रोरही है। आपकी कृपा ही मेरे शरीर की धमनियों की रक्त प्रवाहिका शक्ति है, आप धर्म में धारण शक्ति, अग्नि में उष्णता और सुमन में सौरभ रहने दें, इसी में सब का कल्याण है।

गंगाधर—इस बात का हमें भी कम गम नहीं है।

महेश—कन्या की पवित्रता का ध्यान करते हुए आप उसके परावाद के प्रथमावतार न बनें। आप के कुलदर्शन से ही मेरी पुत्री के हृदय कमल का विकास हो सकता है। आप उसकी कर्त्तव्य पिपासा को समझें, सेवा की क्षुधा का अनुभव करें। उसके मानस प्रासाद को भग्नावशेष न बनावें। उसके भाग्यपत्र पर कठोरता की लेखनी से शेष जीवन की स्याही में भिगो भिगो कर अस्वीकृति के कुअंक अंकित न करें। उनके सुख के सुमन भंडार पर हिम के उपल न बरसावें।

गंगाधर—आप अधीर क्यों होते हैं? सम्बन्ध तो विधि विधान का विलास है।

महेश—प्राणों को धीरता कहाँ? आप जैसे भाग्य विधाताओं को भोग-

प्रिय है, काचन प्रिय है, किन्तु मेरी तनया को तो केवल आपके चरणों की एकमात्र रज प्रिय है। उसे सात समुद्रों में डुबकी लगा कर प्राप्त की हुई अनमोल मौक्तिक माला न चाहिए। त्रिपथगा के पुनीत पाथ से अभिसिञ्चित कल्पवेलि के अमरफल नहीं चाहिए, किन्तु वह केवल आप लोगों के चरणामृत की अधिकारिणी बनना चाहती है।

गंगाधर—अब आप इस विषय में मुझे अधिक विवश न करें।

महेश—आज मुझे असफलता पर लज्जा आरही है मैं जिसे धर्म समझता था, वह धर्म नहीं है। जिसे अधर्म समझता था वह अधर्म नहीं है। इतने अत्याचारों को प्रोत्साहन देने वाला समाज समाज नहीं है। कर्त्तव्य चन्दन विटप पर मुझे भयङ्कर भुजंग दृष्टिगोचर हो रहे हैं। पवित्र गंगा में स्नान करने वाले मानव को कराल मकर निगल रहा है।

ऐ समाज के सुधारकों! आज कन्या के निर्मल जीवन सलिल को लोकाचार के पैरों से किस प्रकार गँदला किया जारहा है। प्यासे को जहर पिलाया जारहा है। भूखे के मुख में राख डाली जारही है। मानव मानव को नाखून की भांति काट कर फेंकने में कुछ भी हिचकता नहीं है। विश्वासघात की समिधाग्नि में वञ्चकता की आज्याहुति दी जारही है। दया का विनाश और विश्वास की हत्या हो रही है। स्वार्थ के महायज्ञ में कर्त्तव्य की सारी कृतियां समिधा के रूप में होमी जारही हैं। आज मुझे सूर्य में अन्धकार दिखाई दे रहा है, आकाश अट्टहास कर रहा है। भूदेवपुरी ताण्डव नृत्य कर रही है।

गगाधर—(कॉपते हुए) (स्वगत धीमे स्वर मे) हे प्रभो ! क्या होने वाला है।

महेश—मनुष्य ने मनुष्य का मोल आँकना छोड दिया। मेरी अन्तर्वेदना मूक भाषा में समाज को शाप देरही है। मेरे हृदय में प्रतिशोध की धूम्रराशि घुट घुट कर निकल रही है। आज सघर्ष करती दो बरसाती नदियों टकराना चाहती हैं। चेतन समाज जडीभूत हो रहा हे। यह असत्य का अभिनय आत्महत्या से भी अधिक भयावह है। आज मेरी कन्या के पवित्र विचारो के चन्दन उपवन की लक-डियों को तोड़ कर चिता का उपकरण करके जीवित ही समाज की शान्ति का दाह-सस्कार किया जारहा है।

पशुओं के वड़े वडे सींग होते हैं तीक्ष्ण नाखून होते हैं पैने दाँत होते हैं, फिर भी अपनी सेवा करने वालों को वे आहत नहीं करते, किन्तु आज समाज सुरभिसम सुखराशि दासी कन्या की निर्मम हत्या कर रहा है, जिसे समय कदापि क्षमा नहीं कर सकता।

(महेशदास मूर्छित होकर गिर पड़ता है)

(पटाक्षेप)



पंचम दृश्य

स्थान—महेशदास का मकान

समय—रात्रि

[जिस प्रकार वन्य पशु हरी हरी मृदु घास बड़ी प्रसन्नता से चरता है किंतु वह नहीं जानता कि इस हर्षोल्लासक घास में जीवन को समाप्त करने वाला विकराल काल का हाथ छिपा है, उसी प्रकार आज शान्ति भी सुन्दर वस्त्राभरणों से सुसज्जित माङ्गलिक भावना स्रोत में निर्द्वन्द्व वह रही है। किन्तु उसे पता नहीं कि उसकी इस प्रसन्नता के पारावार में क्रूर वड़वानल के सदृश महा विपदा अपनी सहचरी मृत्यु के साथ छुप कर अट्टहास करने वाली है। उसे क्षण क्षण में पिता के अचानक चले जाने के विषय में अपार चिन्ता हो रही है। वह सभीत मृगशावक के समान निर्निमेष नेत्रों से अपने पिता के आगमन की बाट देख रही है। रात्रि हो चुकी है किराये की सवारी से उतर कर महेशदास अपने घर में प्रवेश करते हैं, और खाट पर आकर पर कटे पक्षी के समान पड़ जाते हैं। उनका शरीर स्वेदाकलित हो रहा है। आँखें अर्धनिर्मीलित हैं। पलकें भीगी हैं। मुख पर उद्वेग के आकार दृष्टिगोचर हो रहे हैं। शान्ति व्यग्रता से पूछने लगती है।]

शांति—यह क्या पिताजी। आपकी तबीयत ऐसी क्यों हो रही है?

महेश—(मन्द स्वर से) हा शान्ति। हा शान्ति॥

शांति—मैं आपकी शान्ति सेवा में उपस्थित हूँ।

महेश—मेरी शान्ति मुझसे कोसों दूर होरही है।

शांति—पिता जी! शान्ति सदा आपके साथ रहेगी आपकी वत्सलता, दयालुता और स्नेह से वह सदा के लिए छाया बन गई है।

महेश—(उद्वेग में) हिमगिरि की कठोर चट्टानें सस्यश्यामला मही में कदापि परिवर्तित नही हो सकती। सुमनों की माला से मदोन्मत्त निरकुश हाथी नहीं बांधा जा सकता। आज किसी का पाप किसी को खारहा है। सच हे—

और करें अपराध कोऊ।
और पावे फल भोग॥
अति विचित्र भगवन्त गति।
को जग जाने जोग॥

शांति—पिताजी! आज आप इस तरह क्यो बोल रहे हैं।

महेश—आज हँसी को रोते हुए, कठोरता को दीनता का गला घोटते हुए और मलीन अन्तःकरण वालों को आत्मा की निर्मम हत्या करते देख रहा हूं।

शांति—आप अधिक व्यग्र न हों। आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं है। कुछ परिस्थिति का विचार रखें।

महेश—निर्धन की कोई परिस्थिति नहीं होती। दरिद्र की कोई जाति नहीं होती। दुःखी को कभी धैर्य नहीं होता। (घबड़ा कर) बेटी! सावधान हो जाओ। कराल काल दहेज तुम्हें निगलने आरहा है?

शांति—पिताजी! किसी भी अशुभ की आशङ्का न करें।

महेश—आज मैं अन्याय और विश्वासघात का हृदय-विदारक अभिनय देख रहा हूं। शाकाहारी स्वार्थ की क्षुधा-शान्ति के लिए आमिषा-

हारी होरहा है। धर्ममोक्षरूपी प्रकाश पर लोभ के काले मेघ मँडरा रहे हैं।

शान्ति—प्रभु सब ठीक करेंगे। वे कोई शान्ति का मार्ग अवश्य दिखायेंगे।

महेश—अब शान्ति महाशान्ति में परिणत हो रही है। सौन्दर्य कला के उपासक और देवता आज भोग-तृष्णा की पूजा कर रहे हैं। स्वार्थ लिप्सा अजगर सा मुँह खोल कर समाज की शान्ति को निगल रही है।

(महेशदास का दम फूलने लगता है)

शान्ति—आप जोर से न बोलें। इसका स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

महेश—हाँ। बेटी अब मैं बोल भी न सकूँगा। मेरा जीवनाकाश अकाल जलदावलि से समाच्छन्न हो रहा है। त्याग से जीवित रहने वाले समाज के निर्बन्ध विषयोपभोग से अमर बनने के उपक्रम को देख कर किस सचेतन को वेदना की अनुभूति न होगी। संसार में सौजन्य, सत्य, शील के अभाव को निर्निमेष देख कर नभोमंडल का हृदय तक विदीर्ण होरहा है।

(महेशदास को श्वास का वेग बढ़ता है। खाँसी आने लगती है। मुँह से रक्त स्रवण होने लगता है। शांति अपनी साड़ी के छोर से रक्त पोंछती है। आँखें सजल होजाती हैं)

शान्ति—पिताजी। पिताजी।। मैं यह क्या देख रही हूँ।

महेश—(निःश्वास से) मेरी बेटी समाज से प्राप्त तिरस्कार की सुन्दर साड़ी पहन रही है। आँसुओं के मुक्तमाल से उसका कंठ सजा है। समाज के अत्याचार से सम्बन्ध हो रहा है।

अहा ! मैं भी दहेज में अपना सर्वस्व निछावर कर रहा हूं।

(जोरसे हिचकी के साथ महेशदास का दम टूट जाता है, शांति चरणों पर शिर रख कर फूट फूट कर विलाप करने लगती है। निर्मम करुणा का स्रोत उमड पड़ता है। पड़ोसी आक्रन्दन सुन कर वहाॅ एकत्र हो जाते हैं। महेशदास का शव श्मशान भूमि मे ले जाते हैं। दाहसस्कार कर जब सभी वापस आते हैं तो शांति को मूर्छितावस्था मे देखते हैं। सूचित करने पर रक्षक दल का उच्चाधिकारी आता है और डाक्टर के निर्णय पर ज्ञात होता है कि यह जीवन हानि जहर पीने से हुई है। शांति के सिरहाने समाज के नाम एक पत्र मिलता है। शांति की अन्त्येष्टि क्रिया के पश्चात् दूसरे दिन शोक सभा होती है। केशवदास के लिए बड़ी लज्जा का प्रस्ताव पारित होता है। महेशदास तथा शान्ति की दुखद घटना पर सब कोई आॅसू बहाते शोक प्रस्ताव पास करते हैं और उनकी शांति के लिए मौन खड़े होकर परमात्मा से प्रार्थना करते हैं। सर्व-सम्मति से शांति का "समाज के नाम का पत्र" दैनिक समाचार पत्रों में प्रकाशित करने का भी निर्णय होता है। और पत्र को प्रकाशनार्थ भेज दिया जाता है)

"शान्ति का समाज के नाम पत्र"

मेरे पूज्य गुरुजनों ! एवं सुहृदय सज्जनों ! जो स्वाभाविक जीवनतत्वो के सिद्धान्तो के पवित्र विचारों को पालन करने में असमर्थ हैं, जो स्वार्थ लोभ की मोहनिशा में बेखबर सो रहे हैं, जो पवित्र हृदय के सुन्दर विचारों को प्रतिभा नहीं मानते, जो ससार की बाह्य कुरीतियो की विषाक्तवायु से अन्त वृत्ति को बिगडने की चिन्ता नहीं करते, ऐसे पुरुषों के आचरणो से समाज को कितनी भारी

क्षति का सामना करना पड़ रहा है, इस विषय पर समाज हितैषियों को पूर्ण विचार करना परमावश्यक है।

जिन कन्याओं के कोमल हृदय जागने लगते हैं—सुषमा का संसार उमड़ने लगता है—मानस जीवन में सहचर की अभिलाषा उत्पन्न होने लगती है—जीवन कला का अनुपम चित्र और सौन्दर्य मुकुल विकसित होना चाहता है—गृहस्थ जीवन प्रभात में विवाह रूपी दक्षिण पवन भैरव राग छेड़ना चाहता है उन सुभागी कन्याओं को प्रबल समाज की कुरीतियों के मर्मान्तक विषधर भुजंगों द्वारा डसा जाना समाज के नाश का प्रमुख कारण है।

जो जीवन पर्यन्त दुःख में भी साथ रहने की अभिलाषिणी थी। सम्भवतः वियोग में सुख को भी दुःख समझने वाली थी। हाय! उनकी [illegible] पुष्पित फलित होने से पूर्व ही हिमोपल पात से विनष्ट हो गई, यह कैसी विधि की विडम्बना है। इस कारण समाज [illegible] मुझे [illegible] है [illegible] वेदी पर [illegible] भी [illegible] अनेक कुल [illegible] बन्धनों में भी [illegible] विष फैलने की आशंका है, उसे रोकने के लिए ही मैंने यह विधान करना आवश्यक समझा है।

की उनींदी आंखें सदा के लिए खुल जाएँ। आज समाज आँखें खोल खोल कर इस सच्चे आखमिचोनी के खेल को देखे।

आज के युग में कन्या को गृहलक्ष्मी की उपमा देकर ठोकरों से ठौर नहीं है। गुणवान कहने पर भी कोई प्रतिष्ठा नहीं है।

यह कर पकड़ कर मझधार भँवर जाल में छोड़ देना पाणि-ग्रहण का नाटक हिन्दू समाज के धवल अतीत कीर्तिधरा पर अचल अमिट कज्जलगिरि की गहन गुफा है।

मेरे हृदय की मूक वेदना तथा करुणक्रन्दन से चिर सुषुप्त समाज जागरित हो जायगा, मेरी चिता की लोहित लपटों की ज्वाला में भ्रान्त समाज अपना प्रशस्त पथ आलोकित पा सकेगा, मेरी निर्मम कारुणिक आत्महत्या से स्वार्थी समाज स्पष्ट समझ सकेगा, कि वर्तमान का अहवादी प्रवञ्चनपटु समाज किस प्रगति पथ का पथिक बन रहा है।

मेरे हृदय की मौन व्यथा युवकों को साहस का सबल देगी। मेरी अभिलाषाओं का बलिदान मेरी बहनों को अपार शक्ति प्रदान करेगा, जिससे मुझ जैसी किसी भी निरपराधकन्या की निर्मम बलि न हो सकेगी।

जहा सुकुमार कन्याओं के शील, गौरव के रक्षण के लिए अपरिमित बलिदान होते थे। भीषण प्रतिज्ञाएँ की जाती थी। त्याग के महामन्त्र में स्वार्थ की आहुति स्वाहा सम्बोधन कर सर्प समर्पित की जाती थी। कन्या के वरण का वचन देकर उसके उद्धार के लिए शत्रुओं के गर्वोन्नत मस्तक काट काट कर उनके शोणित से सौभाग्य सिन्दूर सजाया

जाता था, उसी समाज में आज सम्बन्ध के वाग्दान सूत के कच्चे धागे बन रहे हैं। ऐसे हिंस्र और निर्मम समाज में जीवित रहने की अपेक्षा मुझे मृत्यु पाश में अपार शान्ति का अनुभव होरहा है।

मैं आज अस्तित्व हीन होने पर भी समाज के भाग्य-विधाताओं की गलतियों का प्रतिकार चाहती हूँ। मेरे जीवन का यह अन्तिम सन्देश समाज के प्रत्येक नागरिक के कर्ण कुहरों से होकर शोणित के कण कण में परिव्याप्त होजावे, जिससे समाज को फिर कभी ऐसे करुण काडों की पुनरावृत्ति पर पश्चात्ताप के आंसू न बहाना पड़े। जिस दिन समाज के कर्णधार ऐसे अत्याचारों, दुराचारों, पापाचारों पर प्रतिबन्ध लगा देंगे उस दिन मेरी अशान्त आत्मा को परम शान्ति मिलेगी।

हरि शरणम्। शांति शांति शांति.।

(पटाक्षेप)



दहेज

पात्र--परिचय

कैलाश--बहुश्रुत, स्वाभिमानी, आशा का पिता

शोभा—प्राचीन संस्कृति-साधिका, कैलाश की सहधर्मिणी

आशा—शिक्षिता, स्वाभिमानिनी, कैलाश की कन्या

दौलतराम—व्यवहार कुशल, तार्किक, प्रकाश का पिता

प्रकाश—सुधारवादी, निर्भीक, वयस्क, दौलतराम का पुत्र

मस्तराम—दौलतराम का द्वारपाल

कवि, व्याख्याता, प्रभृति

प्रथम दृश्य

स्थान—कैलाशभवन की छत

समय—आठ बजे रात्रि

डालती है, इसे यथार्थ में कोई नहीं समझ सकता।

शरदकालीन कलानिधि नभोमण्डल में मेघ मण्डल की अभिनय शाला में नक्षत्रमण्डल के मध्य प्रियरोहिणी के साथ षोडशकलापूर्ण होकर नैशाभिनय का उपक्रम कर रहे हैं।

कैलाश बाबू उम्र ४५ वर्ष। सुडौल शरीर, सादी वेश भूषा में अपने मकान की छत पर बिछी चारपाई पर बैठे हैं। उनके निकट ही गद्दे पर बिछी शतरंजी पर उनकी धर्मपत्नी शोभा उम्र ४० वर्ष, नीलाम्बर जरी की साड़ी पहने बैठी हुई रामचरितमानस में जानकी विवाह का प्रसग पढ़ रही है, जिसे कैलाश बाबू भी बड़े ध्यान से सुन रहे हैं और कथा प्रसग के मध्य में ही कह उठते हैं।)

कैलाश—भद्रे। प्राचीन काल में कितने आनन्द और उमग के साथ कन्यादान दिया जाता था। दाता और प्रतिगृहीता के रोम रोम स्नेहाप्लवित होकर खिल उठते थे। कितना ऊँचा पवित्र आदर्श था हमारे भारतीय समाज, सभ्यता और संस्कृति का।

शोभा—सच है। विष्णुरूपी वर को कन्या रूपी लक्ष्मी का पाणिग्रहण कराने में, शकररूपी स्वामी की सेवा में सतीरूपी तनया को समर्पित करने में, ऋषिकुमार कर्दम के कमनीय कोमल करों में देवहूती रूपी आत्मजा के करारविन्द को उपहृत करने में हमारे पूर्वजों को जो आनन्द आता था, उसका वर्णन अपार है, और उसकी आनन्दानुभूति भी अनिर्वचनीय है।

इस सौभाग्य मास शुभदान में उदासी का तो नाममात्र भी नहीं होता था। सर्वत्र आनन्द और उमंग की सरिता बहती थी।

कैलाश—प्राचीन युग में आर्यभूमि भारत, धनधान्य एव रत्नों से परिपूर्ण

थी। इनका वसुन्धरा नाम सार्थक था। लोगों के मानस-भवन में त्याग का अखण्ड दीप ज्योतिर्मय था। लोग कन्यादान को जीवन का अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य समझते थे। जिनके घरों में कन्यारत्न न था वे भी दूसरों की कन्याओं के विवाह का सम्पूर्ण भारवहन कर जीवन में अनन्त पुण्योपार्जन कर अपूर्व आनन्द का अनुभव करते हुए अपने को कृतकृत्य करते थे। कन्या दान का महत्व शास्त्रों में बहु वर्णित है।

शिवपुराणे —

"कनकं, च तिला, नागा कन्या, दासी, गृह रथ।
मणयः कपिला गावो महादानानि वै दश।"

(सोना, तिल, हाथी, कन्या, दासी, रथ मणि, कपिला गाय ये दश महादान हैं।)

अग्निपुराणे अ० २११

"त्रिसप्तकुलमुद्धृत्य कन्यादो ब्रह्मलोकभाक्"

कन्या का दाता अपने २१ कुलों का उद्धार कर ब्रह्मलोक का भागी होता है।

दान चन्द्रिकायाम् --

श्रुत्वा कन्याप्रदानं च पितरश्च पितामहाः।
विमुक्ताः सर्वपापेभ्यो ब्रह्मलोकं व्रजन्ति ते॥

पिता, पितामह गण भी कन्यादान को सुनकर सभी पापों से विमुक्त होकर ब्रह्मलोक को जाते हैं।

शोभा—कन्यादान का यह शास्त्रीय वर्णन वास्तव में बड़ा ही मधुर है।

कैलाश—आज के अर्थ प्रधान युग में कन्यादान नाम-मात्र प्रतीत होने लगा है। समाज का व्यक्ति कन्यादान इस भार को प्रधान मानता है।

आज के इस दूषित वातावरण में कन्या के माता पिता तब तक अपने को चिन्तामुक्त नहीं कर सकते, जब तक वे अपनी प्रिय कन्या के हाथ पीले न करदें। आज घरों में बढे लड़को का अविवाहित रहना कटु आलोचना का विषय नहीं बनता, किंतु सयानी कन्या के घर मे अविवाहित रहने पर लोग अंगुली उठाने लगते हैं। आकाश पाताल एक करने लगते हैं। अज्ञानवश अंधेरे मे निर्लक्ष्य बंदूक चलाने लगते हैं।

शोभा—इस हृदय विदारक विषमता का कारण क्या है? आज कन्या जन्म और कन्यादान राहुनक्रमण क्यो समझा जाने लगा है?

कैलाश—इसमें प्रधान कारण समाज की सर्वस्व संहारकारिणी प्रथा दहेज है। समाज में कुछ मनमानी चलाने वाले लोभी लोगों ने इस प्रथा को दोषान्वित कर समाज की रीढ़ में विषैला फोड़ा(Carbuncle) कर दिया है। "आत्मा वै जायते पुत्री" के प्रति लाड–प्यार तो दूर रहा इर्ष्या और कोप उत्पन्न कर दिया है।

शोभा—प्राचीन काल में भी दहेज कुछ कम नहीं दिया जाता था। हीरो पन्नों, मोती मणियो से समधी की गाड़ी भरदी जाती थी। भूमि-दान, स्वर्णदान, गोदान, गजदान, वाजिदान और रथदान यथाशक्ति दहेज में दे दे कर कन्या का विवाह संस्कार सम्पन्न किया जाता था। अनेकानेक प्रकार के दान दिये बिना प्रशस्त कन्यादान सफल भी नहीं गिना जाता था। शिव पुराण में लिखा है :—

(१)

कौतुकानि ददौ तस्मै रत्नानि विविधानि च।
चारुरत्न विकाराणि पात्राणि विविधानि च॥

(२)

गवांलक्ष हयानाञ्च सज्जिताना शतं तथा ।

दासीनामनुरक्ताना लक्षं सद्द्रव्यभूषितम् ।

(३)

नागाना शतलक्षं हि रथाना च तथा मुने ।

सुवर्ण जटितानाञ्च रत्नसार-विनिर्मितम् ।

सेनापति हिमालय ने पूर्वोक्त दानो के साथ अनेक अलंकारो से पार्वती को सुसज्जित कर परमेश्वर शिव के लिए विधिविधान से देकर कृतार्थता प्राप्त की ।

शोभा—जो विधान शास्त्रानुमोदित है उसके पालन मे लोग पराङ्मुख क्यों होते हैं ?

कैलाश—दहेज के शास्त्रानुमोदित होने मे कोई सन्देह नहीं है, लेकिन उसका जो विकृत स्वरूप हमारे समाज मे प्रचलित होगया है, वह बहुत बुरा है । मन-भेद की खाई डालने वाला है । जाति के बीच इतना पर समाज को पतनगामिनी बनाने वाला है ।

शोभा—दहेज में ऐसी क्या विकृति आगई है ? इसका दुष्परिणाम जिस से समग्र समाज क्यो श्यामवर्ण होगया है ?

कैलाश—वस्तुगत पदार्थ एक होता है उस का स्वरूप भी आकृति मे समान ही होता है उसका अन्तर्हित धर्म भी एक ही होता है । उसका प्रयोगीकरण भी अभिन्न होता है किन्तु मात्रानुसार परिणाम में अत्यन्त विभिन्नता परिलक्षित होती है ।

चिकित्सक तथा खूनी के चाकू का स्वरूप सम है । दोनों ही मनुष्य के शरीर का छेदन करते हैं । दोनों की क्रियाएं भी सम हैं,

लेकिन परिणाम विषम है। चिकित्सक की शल्यक्रिया मृतप्राय को संजीवनी शक्ति प्रदान करती है। उसके उजड़े चमन में फिर से बहार लाती है। उसकी शुष्क जीवन सरिता में पुनः रस धार प्रवाहित करती है। उधर खूनी का चाकू विनाश की घड़ियाँ लेकर आता है। उसकी सरसब्ज वाटिका को मरुस्थल में परिणत कर देता है। उसकी मनोरथ वेलि को छिन्न भिन्न कर विदलित कर देता है।

शोभा—मैं प्रकृत विषय को स्पष्ट समझ न सकी।

कैलाश—मेरा अभिप्राय दहेज की ओर था। दहेज बुरा नहीं किन्तु उसका प्रयोग बुरा हो रहा है। विवाह में दहेज को सर्वप्रथम तय करके आवश्यक बनाकर हठात् लेना बुरा ही नहीं मानव समाज के लिए अभिशाप है। उन्नत मस्तक का कलंक एवं उसकी स्वार्थपरता का नग्न नमूना है। दहेज की इस घातक मलीन प्रवृत्ति ने धनिकों के हर्म्यों से लेकर गरीबों की झोपड़ियों तक विषाक्त वातावरण को उत्पन्न कर दिया है। अमीर और गरीब सभी इस दहेज के पाटों में पिस पिस कर चूर चूर होरहे हैं। इस दहेज रूपी सुरसा ने मुख फाड़कर समस्त समाज को निगलने का उपक्रम बना रखा है। विद्वान् विदुषी, गुणवान् गुणवती किशोर किशोरियों की जीवन चन्द्रमसी के लिए यह राहु से भी क्रूर है। जब तक समाज सरोवर से इस विकृतमीन का निष्कासन नहीं होगा तब तक मानवमात्र स्वच्छ सलिल सुख के अभाव में सदैव सतृष्ण एवं संतप्त रहेगा।

शोभा—यह धार्मिक प्रथा इतनी हेय दृष्टि से क्यों देखी जाती है? पुरातन पवित्र आचरणों पर कटु आलोचना की प्रवृत्ति क्यों होती है? किसी को इसमें हस्तक्षेप करने का क्या अधिकार है?

कैलाश—ऐसा नहीं है। प्राचीन काल में दहेज का स्वरूप बड़ा ही मनोहर था। उसका मूल सद्भावना और सहानुभूति के स्वच्छ भूमिखण्ड के अन्तराल में निहित था। दहेज देने वाले दहेज की स्वीकृति देने के लिए सौ सौ बार सविनय प्रार्थना करते थे। लेने वाले हजार बार इसे लेने से इनकार करते थे, किन्तु आज देने वाले हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ाते हैं, अपनी बेबसी की करुण कथा बार बार सुनाते हैं दीन वचन बोलते हैं, यथा शक्ति यथेष्ट दहेज देने की प्रतिज्ञा करना चाहते हैं किन्तु लेने वाले क्रूर बनकर मनमानी दहेज लेने का [illegible] पूर्ण हठ करते हैं, और उनकी आशाओं पर [illegible] की वर्षा करते हैं, उनके [illegible] में चिनगारी भरते हैं। [illegible] बालिका व सुन्दर युवती को मनमानी दहेज की लिप्सा [illegible] से [illegible] शोषित, अपमानित कर देने वालों से निर्लज्ज, [illegible] क्या [illegible] अपराध क्या [illegible] है?

कुनीति से महलो की हस्ती, झोपडियो की मस्ती, और गाँवो की बस्ती अन्तिम श्वासें गिन रही हैं। भारतीय संस्कृति का प्रचण्ड-रश्मि मार्तण्ड अस्ताचल शिखर की ओर प्रस्थान करता जान पड़ता है।

शोभा—मैं इस विषय में आपके निर्णयामृत को और भी अधिक पान करने को आतुर हूं। मेरी यह जिज्ञासा है कि प्राचीन काल में दहेज की क्या प्रथा थी उसमे क्या प्रशस्तता थी? एक समय तो वह था, जब दहेज रूपी माला वक्षस्थल की शोभा बढ़ाती थी। एक समय यह है, जिसमे उसे ग्रहण करने पर भार से दम घुटने लगा है। आखिर इसका उत्तरदायित्व समाज को कबतक परिवहन करना पडेगा।

कैलाश—प्राचीन काल की सामाजिक व्यवस्था अर्थ की आधारशिला पर नहीं थी, उस समय दहेज को इतना महत्व नहीं दिया जाता था—दहेज में क्या मिलेगा? कितना मिलेगा? कैसे मिलेगा? कब मिलेगा? इस पर किसी का ध्यान आकृष्ट नहीं होता था। इस विषय में वार्तालाप करना मत्तप्रलाप से न्यून नहीं था। दहेज देने वाले सहृदय, पुष्प को पाँखुडी कह कर देते थे। लेने वाले अनासक्त परिग्रही भी जल की बूँद को अमृतशीकर के रूप मे स्वीकृत कर मनमोद भरते थे। दाता और प्रतिगृहीता दोनो प्रेम और सज्जनता के भार से अवनत रहते थे। दोनो की आँखें नीची रहती थीं, दाता "कुछ नहीं दिया" गृहीता "बहुत लिया" के दिव्यादानप्रदान के अलौकिक भाव से परितुष्ट होते थे।

शोभा—वह प्रशान्त विश्वस्त वातावरण कितना हमारे समाज के अनुकूल रहा होगा?

कैलाश—ऐसा नहीं है। प्राचीन काल में दहेज का स्वरूप बड़ा ही मनोहर था। उसका मूल सद्भावना और सहानुभूति के रम्य भूमि खण्ड के अन्तराल में निहित था। दहेज देने वाले दहेज की सम्पत्ति देने के लिए सौ सौ बार सविनय प्रार्थना करते थे। लेने वाले हजार बार इसे लेने से इनकार करते थे, किन्तु आज देने वाले हाथ जोड़ कर गिड़गिड़ाते हैं, अपनी बेबशी की करुण कथा बार बार सुनाते हैं, दीन वचन बोलते हैं, यथा शक्ति श्रद्धापूर्वक दहेज देने की प्रतिज्ञा करना चाहते हैं, किन्तु लेने वाले क्रूर बनकर मनमानी दहेज लेने का अत्याचार पूर्ण हठ करते हैं, और उनकी आशाबेलि पर दावाग्नि की वरसा करते हैं, उनके खून से पिचकारी भरते हैं। समाज वाटिका के सुन्दर सुमनों को मनमानी दहेज की विषम वात्या से दलित, शोषित, उन्मूलित कर देने वाले ये निर्मोही, स्वार्थी क्या कभी श्रद्धास्पद बन सकते हैं?

शोभा—दहेज का प्राचीन विशुद्ध स्वरूप वास्तव में विकृत होगया है। यदि इसका तत्काल यथोचित प्रतीकार नहीं किया गया तो यह सामाजिक संघटन को एक दिन अवश्य छिन्न–भिन्न कर देगा।

कैलाश—दहेज की विकृतप्रथा ने पवित्र समाज में दूषित प्रवृत्ति की अभिवृद्धि कर इसे गर्त में डाल दिया है। सगे सम्बन्धियों के मानस सरोवर से वह निकलने वाले प्रेमनद को सुखा दिया है। जिस प्रेम-प्रवाह से मानव समाज उर्वर क्षेत्र सा लहलहाने लगता, मलयज समीर के मन्द मधुर झोंकों से बलखाने लगता, भूमंडल स्वर्ग बन जाता, आज वहाँ झंझा है, तूफान है, प्रलयंकर भयंकर दृश्य उपस्थित है करका विनाशकारी ताण्डव कर रही है। इस कुरीति और

कुनीति से महलो की हस्ती, झोपडियो की मस्ती, और गाँवों की वस्ती अन्तिम श्वासें गिन रही है। भारतीय संस्कृति का प्रचण्ड-रश्मि मार्तण्ड अस्ताचल शिखर की ओर प्रस्थान करता जान पड़ता है।

शोभा—मैं इस विषय में आपके निर्णयामृत को और भी अधिक पान करने को आतुर हूं। मेरी यह जिज्ञासा है कि प्राचीन काल में दहेज की क्या प्रथा थी उसमें क्या प्रशस्तता थी? एक समय तो वह था, जब दहेज रूपी माला वक्षस्थल की शोभा वढ़ाती थी। एक समय यह है, जिसमें उसे ग्रहण करने पर भार से दम घुटने लगा है। आखिर इसका उत्तरदायित्व समाज को कवतक परिवहन करना पडेगा!

कैलाश—प्राचीन काल की सामाजिक व्यवस्था अर्थ की आधारशिला पर नहीं थी, उस समय दहेज को इतना महत्त्व नहीं दिया जाता था—दहेज में क्या मिलेगा? कितना मिलेगा? कैसे मिलेगा? कव मिलेगा? इस पर किसी का ध्यान आकृष्ट नहीं होता था। इस विषय में वार्तालाप करना मत्तप्रलाप से न्यून नहीं था। दहेज देने वाले सहृदय, पुष्प को पाँखुडी कह कर देते थे। लेने वाले अनासक्त परिग्रही भी जल की वूँद को अमृतशीकर के रूप मे स्वीकृत कर मन-मोद भरते थे। दाता और प्रतिगृहीता दोनो प्रेम और सज्जनता के भार से अवनत रहते थे। दोनो की आँखें नीची रहती थीं, दाता "कुछ नहीं दिया" गृहीता "वहुत लिया" के दिव्यादानप्रदान के अलौकिक भाव से परितुष्ट होते थे।

शोभा—वह प्रशान्त विश्वस्त वातावरण कितना हमारे समाज के अनुकूल रहा होगा?

कैलाश—किन्तु वर्तमान युग में दाता पुष्प की जगह पाँखुड़ी को कल्पवृक्ष बना कर देना चाहता है, और लेनेवाले अनमोल पानीवाले हीरों को पत्थर के साधारण शकल समझ कर मुँह फेर लेते हैं। विवाह चर्चा के श्रीगणेश मे ही सर्व प्रथम दहेज का निश्चय किया जाता है। गुण, वश, सुन्दर स्वरूप, शिक्षा और प्रतिभा की ओर लेशमात्र भी ध्यान नहीं दिया जाता। आज विवाह तो पैसे, सम्पत्ति और समृद्धि का होता है। चचला की हाट मे लड़के, लड़कियाँ खरीदे और बेचे जाते हैं। यही कारण है कि समाज पतनोन्मुख है। दहेज मे छिपी दानवी स्वार्थलिप्सा अनुदिन इसे निष्प्राण बना रही है। इसके सम्मुख गुणरूपी देवता पराजित हो जाते हैं।

शोभा—सचमुच दहेज का यह स्वरूप बड़ा भयावह और विकृत है।

कैलाश—विवाह के प्रत्येक मगल विधान पर स्वार्थरूपी-गिद्ध सूक्ष्मातिसूक्ष्मदर्शक दृष्टि से गृध्नु बनकर देखता रहता है। साधारण से साधारण वस्तु की कीमत आँकने मे वाक्चातुर्य प्रदर्शित किया जाता है।

वस्तुत मानवता की निर्मम हत्या और दानवता का तालम विजृम्भण जितना इस दहेज लीला में है, उतना अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। कन्या के माता पिता की दशा तो अतीव हृदय विदारक हो जाती है। वे जेवर, घर, सर्वस्व गिरवी रख कर या विक्रय कर दहेज देने को बाधित किए जाते हैं लेकिन फिर पुत्र (वर) के पिता, पितृव्य, अग्रज, पितामहादि यही कहते सुने जाते हैं कि "दहेज क्या मिला है—बरबादी मिली है! राख मिली है। यदि अन्यत्र सम्बन्ध होता तो दहेज से घर भर जाता मालामाल हो जाते"।

यह दहेज समाज के उच्चादर्श के षोडश कलापूर्णचन्द्र का अमिट कलंक है, जिसका प्रक्षालन अनेक साधनोपकरणों से भी सम्भव नहीं ज्ञात होता।

शोभा—दहेज का यह विकराल स्वरूप देख सुन कर हृदय काँप रहा है; व्याकुलता से हृदय की धड़कन बढ़ रही है, आँखों के सम्मुख तिमिरतति का कृष्णपक्ष अनुभूत होरहा है। (कण्ठावरोध से) जब मेरी आशा के लिए भी ऐसा विषम वातावरण उपस्थित होगा तब मैं क्या करूँगी। भोली भाली आशा की मानसिक हत्या जब दहेज की बलिवेदी पर निर्दयता से की जायगी तब क्या मैं उसे देख सकूँगी? मेरी आशा वेलि से तब क्या सुख के सुमन सौरभ झरेंगे? (आँखों से आँसू झरने लगते हैं। पुस्तक पढ़ना बन्द कर देती है)

कैलाश—तुम्हें इतना आकुल नहीं होना चाहिए। आशा को पढ़ा लिखा कर गुणवती सौम्य और सुशील बनाना आवश्यक है। जब यह सुयोग्य हो जायगी तब इसका समुचित समादर अवश्य ही होगा। और वह समाज में अभिनन्दनीय भी होगी। कन्याओं की अशिक्षा दहेज की दूषित प्रवृत्ति को बढ़ोतरी देने में एक प्रमुख कारण है। विलास वैभव की मनोवृत्तियाँ दहेज प्रथा का सृजन करती हैं, जिससे सुखमय वैवाहिक उच्चादर्श प्रतिभूत होरहा है। (आशा आयु १६ वर्ष, सौम्य स्वभाव हाथ में पुस्तक लिए शोभा के पास आकर बैठ जाती है, और अनमनी सी संकुचित वृत्ति से माता की ओर देखती हुई पुस्तक के पृष्ठों को उलटती भी जाती है। शोभा आशा के मस्तक पर हाथ फेरती हुई प्यार करती है। कैलाश गम्भीर मुद्रा में छत पर अन्यमनस्क हो टहलने लगते हैं)

आशा—माता जी! बहन जी के पढ़ाने की शैली इतनी सुन्दर है कि कभी भी पढ़ने में मन नहीं ऊबता। इच्छा होती है कि वे हमेशा पढ़ाती रहें और हम पढ़ती रहें। अब मुझे संगीत के साथ साथ वाद्ययन्त्र भी बजाना सिखायेंगी। वे संगीत कला में भी परम प्रवीण हैं। हमारी साप्ताहिक सभा में जब कभी वे गाती हैं तो सारी सभा मन्त्रमुग्ध हो चित्रखचित सी हो जाती है। अब मैं भी वीणा पर गायन की शिक्षा लूँगी। हारमोनियम पर गाना मुझे रुचिकर प्रतीत नहीं होता, क्यों कि कलामर्मज्ञ संगीताचार्यों ने हारमोनियम को वाद्ययन्त्र का कलंक बताकर उसे संगीत साधना से बहिष्कृत मान लिया है। अब आप मुझे शीघ्र ही एक वीणा मँगा दें।

शोभा—(बीच ही में) नहीं! नहीं! ऐसा उचित नहीं!! बड़े घरों की बहू बेटियाँ विशेष गाना बजाना नहीं सीखा करतीं। तुम्हें गाना सीख कर क्या करना है। तुम्हें तो गृहकार्यों में प्रवीण बनना चाहिए, जिससे गार्हस्थ्य जीवन आनन्द सुखकर हो। जो कन्याएँ गृहकार्यों में प्रवीण नहीं होतीं उनका आदर्श परिवार में समादर नहीं होता। अब संगीत का विचार छोड़कर गृहकार्य में दक्षता पाने की साधना करो। यही श्रेयस्करी वरदायिनी और सुखदायिनी कला है।

आशा—माताजी! संगीत भी तो एक ललित कला है। एक दिन बहन जी ने कहा था 'संगीत-साहित्य कला विहीन साक्षात पशु पुच्छ विषाण हीन', अर्थात संगीत विहीन जीवन पशुतुल्य है। इसी प्रसंग में उन्होंने यह भी कहा था "नाद ब्रह्म कहलाता है"। वृत्तियों पर जितना प्रभाव संगीत का पड़ता है, उतना गायनकला के अतिरिक्त अन्य ललित कलाओं का नहीं पड़ता। भयङ्कर विषधर भुजङ्ग भी

सगीत के वशीभूत हो जाते है। इससे जड तक स्पन्दित हो उठता हे चेतन की तो बात ही क्या !

शोभा – (बीच मे बात काट कर कैलास बाबू की ओर सकेत करती हुई) यह आपकी दुलारी आशा सगीत सीखने का हठ कर रही है।

कैलाश—क्यो नहीं ! सीखना ही चाहिए। संगीत भी तो एक उपादेय कला हे।

शोभा—क्या कन्याओं को सगीत सीखना शोभा देता है ?

कैलाश—क्यों नहीं ? यह तो शास्त्र सम्मत है। सृष्टि के निर्माण में चारो वेदो का स्थान अग्रगण्य है, उनमे सगीत का प्रतिनिधि सामवेद है। सगीत की अधिष्ठात्रीदेवी शारदा ही तो गुहानिविष्ट वाणी को अभिव्यक्त कर व्यवहार जगत का सचालन करती है। संगीत की ध्वनि देवाधिदेव महादेव के श्रुति पुटों में अमियरस बरसाती हुई सच्चिदानन्द का स्रोत बहाती है। ताण्डव के ताल ताल पर डमरू ध्वनित होता रहता है।

सृष्टिपालक विष्णु का पाञ्चजन्य भी तो संगीतप्रियता का ही द्योतक है। चतुर्मुख ब्रह्मा कमलासन पर विराजमान होकर साम के गायन से आनन्द विभोर होते रहते हैं। नारद-गान्धर्वादि भी वीणा की श्रुतिमधुर, स्वरलहरी में प्रतिपल लहराते हैं। देवराज की सुधर्मा (देवसभा) सगीत की मन हर मादक मधुर झकार से झकृत रहती है। बर्हापीड नटवरवपु गीतकीर्ति घनश्याम की जादूभरी मुरली से गो, गोप, गोपवनिताएँ एव सचराचर विश्व सुधि बुधि खो देता था। मनमोहन की बाँसुरी की माधुरी जड को जगम तथा जगम को जड बना देती थी। कालिन्दी का जल अनर्तित हो

निष्पन्द हो जाता था। कालियनाग की घटाटोपफटा भी पीयूष-वर्षिणी हो गई थी।

शोभा—सर्वत्र समुपलब्ध सन्ते सगीत के अतिरिक्त भी कोई उन्नायक मोहक सरस सगीत और होता है, जिसके वास्तविक प्रभावों का वर्णन अभी अभी आपने किया है? क्या वास्तव में समस्त चराचर इसकी परिधि के भीतर व्याप्त हो जाता है?

कैलाश—सगीत प्राणिमात्र के उन रगों को स्पर्श करता है, जिनमें रसिकता की मन्द मन्द मन्दाकिनी अजस्र प्रवाहित रहती है। वेणुनाद-नपरायण सगीत कामकलानिधि ने सगीत के महत्त्व को इस प्रकार व्यक्त किया है—

नाहं वसामि वैकुण्ठे, योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ता यत्रगायन्ति, तत्र तिष्ठामि नारद !

परम प्रभु वैकुण्ठ में नहीं विराजते, जन्म जन्मान्तर आत्म-साधना में युक्त योगियों के हृदय कमल पर अपना अधिष्ठान नहीं बनाते, वे वहीं साक्षात् विराजमान रहते है, जहां उनके भक्त प्रेम, भक्ति, श्रद्धा की सुरसरिता में निष्णात होकर उनकी कीर्ति कला का सगाथ कलित गायन किया करते हैं, प्रेम के आसुओं से भक्ति के बिरवे को सींचा करते हैं। आनन्द के रसमय फल का आस्वाद लेते रहते हैं।

शोभा—मुझे मेरे अधूरे ज्ञान पर सकोच हो रहा है। अवगत होरहा है कि वास्तविक सगीत कला से मैं कोसों दूर थी। आप अपनी सगीतानन्दानुभूति से मुझे अवश्य तृप्त करदें।

कैलाश—सगीत · भक्तिनद का प्रवाह है।

विह्वलहृदय का आत्म निवेदन है।
जगत की स्वाभाविक गति है।

वह कहां नहीं है? शीतल मन्द सुगन्ध प्रवहमान पवन भी सर सर गति में सगीत के स्वरालाप से वचित नहीं है। उन्नत शिखर गिरिराज से उद्गत होकर बहने वाली भगवती भागीरथी की श्रुति मधुर कलकल मे भी सगीत की ही स्वर साधना है। मधुमास परिचारिका परभृत की काकली, घन मत्तमयूर की केका, वनोपवन विहरणशील विहगमो की प्रभाती, गोचर को जाती हुई धेनुमण्डली की चरणरणी, मरकन्द-पान मद अन्ध मधुप की गुञ्जार, सुमन सौरभसरसपुलिन कलिकाओ के प्रस्फुटन मे-सगीत की अन्त सलिला ही तो प्रवहमान है। सगीत की व्यापकता नीलाम्बर की व्यापकता है। उसका स्पन्दन प्रकृति का स्पन्दन है। वह सरसतत्त्व जीवन की अनमोल घड़ी है।

शोभा—सचमुच सगीत प्रकृति की अपूर्वदेन है। यह जीवन के अणु अणु में व्याप्त परिलक्षित होरहा है।

कैलाश—"द्वारे ठाढो आँधरो भिखारी" सूर भक्ति-सागर में सगीत से ही नौका विहार किया करते थे। मीरा की प्रेम-वेलि सगीत के सलिल से ही अभिषिञ्चित थी। जयदेव और मैथिल कोकिल विद्यापति सगीत की मनहर मादकता से ही "वसति वने वनमाली" और "जनम अवधि हम रूप निहारल, नयनन तिरपित भेल" लिख पाये। सगीत वस्तुत एक सागर है, जिसकी गुणशीकरावलि को गिनना शक्ति से बाहर की बात है। बेटी आशा! वह सूर का पद हारमोनियम पर सुनाओ, जिससे तुम्हारी मां को भी पूर्ण अवगत हो जाय कि सगीत कला में कितना आकर्षण एव अघटित-घटना

पाटव सामर्थ्य है (आशा हारमोनियम लाती है और पदगायन करती है ।)

श्याम ने मुरली मधुर बजाई ।

सुनत टेर तन सुधि बिसराई गोप बालिका धाई ।
लँहगा ओढ़, ओढ़ना पहिरैं, कचुकि भूलि पराई ॥
नकबेसर डारे श्रवनन मे, अद्भुत साज सजाई ।
धेनु सकल तृन चरन बिसारो, ठाडी श्रवणन गाई ॥
बछडन के थन रहे मुखन में, सो पयपान भुलाई ।
पशु पक्षी जँह तँह रहे ठाढे, मानो चित्र लिखाई ॥
वृक्ष पहाड प्रेम वश डोले, जड़ चेतनता आई ।
कालिन्दी प्रवाह नहि चालो, जलगति सुधि बिसराई ॥
शशि की गति अवरुद्ध भई, नभ दल बिमानन छाई ।
धन्य बाँस की बनी बसुँरिया महापुन्य करि आई ॥
सुर मुनि दुर्लभ रुचिर सहज नित, राखत श्याम छुपाई ।

शोभा--अच्छा बेटी । भगवान मेरी आशा की आशा अवश्य पूर्ण करेंगे फिर तो आशा का दूसरा नाम वीणापाणि होगा । (शिर स्पर्श करती है)

(पटाक्षेप)



द्वितीय दृश्य

स्थान—दौलतराम का मकान

समय—आठ बजे प्रात'

("सब दिन होत न एक समान" दो वर्ष पहलेकी घटना है-शहर में एक भयङ्कर अग्नि-काण्ड हो जाने के कारण कैलास बाबू की सारी सम्पत्ति अग्निदेव के कोप से लोप होगई। आज वे निर्धन ही नहीं, अपितु कर्जदारी के कारागार मे निवास कर रहे हैं, फिर भी मनस्वी होने के कारण परिश्रम करके जीवन पथ को सुगम और सुखमय बनाने के सिद्धान्त पर अटल हैं। वे ऋण से इतना चिन्तित नहीं, जितना अपनी अष्टादश वर्षीया कन्या के विवाह सम्बन्ध के लिए चिन्तातुर हैं। साथ ही साथ अपने पञ्चवर्षीय आत्मज आमोद के अविलम्ब प्रारम्भ होने वाले अध्ययन के लिए भी कम व्यग्र नहीं हैं।

इधर शहर में सेठ दौलतराम का नाम प्रत्येक मनुष्य की जबान पर चढा हुआ है। पिछले दिनों बाजार की बेहद तेजी ने सेठ साहब को कौडीपति से करोड़पति की श्रेणी में ला बैठाया है। आयु ६० से ऊपर होने पर "वृद्धोऽपि तरुणायते" से ४० वर्ष से भी कम के दीखते हैं। अपने एक मात्र औरस पुत्र प्रकाश के उच्च विद्याध्ययन से फूले नहीं समाते। वह वाराणसेय विश्वविद्यालय से बी ए. परीक्षा देकर लौटने वाला है। वह लगातार २ वर्षों से बाहर अध्ययन करता रहा है, अत दौलतराम उसके आगमन की बड़ी उत्कंठा से प्रतीक्षा कर रहे हैं। सम्भवत उसके आने पर अविलम्ब ही उसका

विवाह भी सम्पन्न होगा। एतदर्थ घर में प्रसाधन कार्य (रंगाई पुताई) भी तेजी से होरही है। प्रकाश का नियत निवास प्रकोष्ठ विशेषत सुसज्जित किया जारहा है। मजदूर कामकाज में सोल्लास व्यस्त हैं। कारीगर भी अपनी कला का अपूर्व प्रदर्शन कर रहे हैं। इन्हें भी तो प्रकाशबाबू की बारात में बराती बनकर चलना है जहाँ अकड़ अकड़ कर चलने में ये किसी से पीछे नहीं रहेंगे। प्रधान द्वार का द्वारपाल युवक मस्तराम भी सीना तान कर अपनी ड्यूटी पर खड़ा है। जिसे प्रकाश के विवाह में उनके अंग रक्षक बनने की पूर्ण आशा है। इस उत्साहपूर्ण वातावरण में ही कैलाश अपनी कन्या के सम्बन्ध की आशा लेकर वहां आते हैं और विनम्रता से खड़े द्वारपाल के पास जाकर प्रश्न करते हैं।)

कैलाश—सेठ दौलतराम घर में हैं ?

मस्तराम—क्यों साहब। दौलतराम जी कहते शर्म आती है। आपको पता नहीं है, दौलतराम जी दूल्हे के बाप हैं ? सारी विवाह की तैयारियाँ ठाटबाट से हो रही हैं ? क्या आपको बेटे के बाप की इज्जत का ख्याल नहीं ?

कैलाश—भैया। तुम्हारा कहना सच है। (मन्दस्वर में) "जो मालिक मेहरबान उसका गधा भी पहलवान" भैया। क्षमा करना। सेठ जी दौलतराम जी के दर्शन अभी प्राप्त हो सकते हैं।

मस्तराम—क्यों नहीं ? सर सलाम अभी उतरे था। घर रहे हैं, फिर आपका भी नम्बर आ जायगा। आजकल सूर्योदय के साथ ही साथ अनेकानेक कन्या पक्ष के लोग तिरसठ (६३) बनके आते हैं और छत्तीस (३६) बनकर लौट जाते हैं। (एक टेढ़ा स्मित हुए आप उस पर सिरसे।

थोड़ी देर में सेठ साहब से मुलाकात हो जायगी। कैलाशबाबू बेंच पर बैठ जाते हैं। क्षणानन्तर एक सज्जन प्रकोष्ठ से बाहर निकलते हैं। मन्तराम के सूचित करने पर किसी परिचारक के साथ कैलाशबाबू साक्षात्कार के लिए भीतर जाते हैं।)

कैलाश—नमस्ते श्रीमान जी।

दौलतराम—नमस्ते। कहिए कैसे पधारना हुआ।

कैलाश—(हाथ जोड़कर) श्रीमान् की सेवा में कुछ निवेदन करना चाहता हूँ।

दौलत—हाँ कहिए। आपका शुभनाम।

कैलाश—लोग मुझे "कैलाश" कहकर पुकारते हैं।

दौलत—क्या आपको ही दो वर्ष पूर्व शहर के महान भयङ्कर अग्नि काण्ड में अपार हानि हुई थी?

कैलाश—जी हाँ। नियति ने मेरे ही भाग्य से खेल-की थी। ईश्वरीय कोप के सामने कोई क्या कर सकता है?

दौलत—कहिए मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ।

कैलाश—मैंने आपके कुलदीपक प्रकाशबाबू की बड़ी प्रशंसा सुनी है।

दौलत—यह तो भगवान् की कृपा है? आप लोगों के आशीर्वाद से उसने इस वर्ष बी०ए० की परीक्षा दी है।

कैलाश—मेरा आपसे अनुरोध है कि ...

दौलत—हाँ हाँ। निस्संकोच कहिए?

कैलाश—मैं बड़ी आशा लेकर आया हूँ।

दौलत—आशा के ही सहारे सारा जगत अवस्थित है।

कैलाश—मेरी एकमात्र कन्या आशा प्रकाश की चिरसंगिनी बन कृतार्थ

हो यही मेरी विनम्र प्रार्थना है।

दौलत—किन्तु

कैलाश—आपकी छत्रच्छाया में मेरा सब कष्ट दूर हो जायगा।

दौलत—परन्तु

कैलाश—मुझसे जैसी सेवा बन पड़ेगी अवश्य करूँगा, किसी प्रकार की न्यूनता नहीं होने पायेगी।

दौलत—लेकिन . . ... .

कैलाश—यदि आज्ञा हो तो मैं आपकी सेवा मे आशा की योग्यता के विषय मे निवेदन करूँ?

दौलत—नहीं। आपकी कन्या की योग्यता के विषय में चर्चा की आवश्यकता नहीं है। किसी गुणी के गुण कभी छिपे नहीं रहते। सच कहा है—

"यदि सन्ति गुणाः पुंसाम्।
विकसन्त्येव ते स्वयम्।
नहि कस्तूरिकामोदः।
शपथेन विभाव्यते।

(मनुष्यों के पास यदि गुण हैं तो वे अवश्य ही विकसित होते हैं कस्तूरी की सुगन्धि, शपथ से नहीं जानी जाती।) मैंने आपकी पुत्री को गत वसन्तोत्सव पर "शारदा भवन" मे देखा था। जब उसने वीणा पर "तुषारहार धवला भगवती सरस्वती की स्तुति की तब कुछ क्षणों के लिए ऐसा जान पड़ता था कि मन्दस्मित शुभ्र वसना शारदा की प्रतिमा और आशा में वास्तविक वीणापाणि किसे कहा जाय।

कैलाश—यह सब आप लोगों की कृपा है!

दौलत—यह तो गुणों की अमोघ शक्ति होती है, जो हठात् सबके हृदयों को अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है।

कैलाश—इस सम्बन्ध के विषय में आपकी आज्ञाएँ शिरोधार्य होंगी ?

दौलत—तो भी ... ...

कैलाश—विवाह की सारी व्यवस्थाएँ तथा आपके साथ बारातियों का आतिथ्य सत्कार आपके मनोनुकूल ही सम्पन्न होगा ?

दौलत—फिर भी ... ...

कैलाश—आपके कुल की परम्परागत रीति-रिवाजों का सदैव मान किया जायगा ?

दौलत—आपकी सारी बातें उचित हैं, केवल एक बात विशेष रूप से आपके सम्मुख नहीं रखी गई है।

कैलाश—(प्रश्नवाचक मुद्रा में) वह क्या।

दौलत—बात तो साधारण सी है ?

कैलाश—जो भी बात हो निस्संकोच कहें।

दौलत—देखिये कैलासबाबू। आज कल विवाह में व्यर्थ दिखावटी खर्चा करना तो लोग बिलकुल ही पसन्द नहीं करते। धीरे धीरे यह फिजूलखर्ची की रिवाजें उठती चली जारही हैं। केवल आजकल...

कैलाश—आप मेरे निवेदन पर अपनी स्वीकृति प्रदान करें।

दौलत—हम लोग सादगी पसन्द करते हैं सारी व्यवस्था वर्तमान समय को देख कर ही करनी चाहिए।

कैलाश—आपके सिद्धान्त सामयिक एवं सर्वत्र सतत सर्वथा प्रशंसनीय भी हैं। आपकी आज्ञा प्राप्त कर अब मैं इस माङ्गलिक कृत्य की तैयारियाँ करने को समुत्सुक होरहा हूँ।

दौलत—क्यों नहीं। आपकी सारी बातें स्वीकार्य हो सकती हैं।
(कुछ रुककर)
आजकल की रिवाज के अनुसार विवाह की मुख्य रीति का तो अवश्य ही पालन होना चाहिए।

कैलाश—(साश्चर्य) वह क्या ?

दौलत—कुछ नहीं। वही दहेज की रीति जिसे शास्त्रों में उन्मुक्तहस्त हो देने का आदेश दिया गया है।

कैलाश—क्यों नहीं। मैं कब इनकार करता हूं। मैं इस विषय में अपनी शक्ति से भी अधिकाधिक प्रयत्न करूँगा।

दौलत—ऐसा नहीं। आजकल इसका निर्णय पहले ही हो जाया करता है। नीतिकारों ने कहा है—

कारज वोही कीजिये,
पहले कर निरधार।
पानी पी घर पूछनो
जो ना भलो विचार।

कैलाश—कुछ हर्ज नहीं। आपकी जो भी आज्ञा होगी। मैं कभी इनकार नहीं कर सकता।

दौलत—आपतो स्वयं समझदार हैं। प्रत्येक मनुष्य अपनी प्रतिष्ठा कायम रखना चाहता है। इस विषय में आपको भी मेरी हैसियत के मुताबिक शोभा जनक दहेज अवश्य ही देना चाहिए। कन्यादान तो महादान है। अनेक दानों के साथ ही इसे किया जाता है। तभी विवाह संस्कार शुभोत्सव सार्थक समझा जाता है। दहेज में वस्त्राभरणों के अतिरिक्त इतनी नकदी रकम भी अवश्य होनी चाहिए जिसकी सभी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करें।

कैलाश—तो कितनी नकदी रकम से-आपकी अनुरूप प्रतिष्ठा वृद्धि हो सकती है ?

दौलत—(कुछ सोचकर) हम भी तो लडकियो की शादी करते हैं, और अनुरूप-दहेज भी देते हैं। उस परम्परा के लिए कम से कम १० हजार तो अवश्य ही होने चाहिए।

कैलाश—(चौककर) कितने। कितने !!

दौलत—केवल दश हजार। यह तो आपके लिए कम से कम कहा गया है, क्यो कि मुझे आपकी प्रतिष्ठा का भी तो ध्यान है। यह तो तिलक के समय का पत्र पुष्प है, फिर विवाह के समय तथा उसके बाद के नेग तो होते ही रहेंगे।

कैलाश—(गम्भीरमुद्रा मे) मैं आपकी बात तो टालना नहीं चाहता, किन्तु अभी मेरी आर्थिक स्थिति इसके अनुकूल नहीं है।

दौलत—यह दहेज है, इसके लिए उदारता का भाव रखना चाहिए। यह तो शोभाजनक कृत्य है। हृदय को विशाल करने की आवश्यकता है।

कैलाश—आपके विचार उत्तम हैं, किन्तु इस समय में नितान्त असमर्थ सा हू। बडे वे ही होते हैं, जो दया करते हैं।

दौलत—ऐसे माङ्गलिककार्यो मे व्यापारप्रवृत्ति से व्यवहार कहाँ तक उचित है ?

कैलाश—यह व्यापार प्रवृत्ति नहीं, किन्तु आत्म निवेदन है।

दौलत—फिर आपको बडेघरो में कन्यादान का सुखद स्वप्न न देखना चाहिए। मनचाहा सुयोग्य, सुपात्र वैभवशाली, सुन्दर, कुलीन वर की कामना कर अपनी प्यारी कन्या को आजन्म सुख के झूले मे झुलाने का स्वप्न देखना कहाँ तक न्याय सगत कहा जासकता है। दहेज लेने

वाले चाहे इनकार करें किन्तु देने वाले कभी कदम पीछे नहीं रखते। ऐसी ही धारणावाले साधारण पुरुष भी यदि बड़ेघरों में अपनी कन्याओं को देने का प्रयत्न करें, तो उनकी कन्यायें सर्वतोभावेन सुखी रह सकती हैं।

जहाँ साधारण मनुष्य अपनी चातुर्यकला से दहेज का आश्वासन दे बड़ेघरों में कन्यादान कर देते हैं किन्तु प्रतिज्ञात रकम पूरी न देने की दशा में तथा सारी रीति रिवाजों को भी पूर्ण न कर सकने के कारण वैमनस्य की आग भड़क उठती है। सारी रस्मों के यथावत पूर्ण न होने से नववधू को पग पग प्रतिपल परिजनों के व्यङ्ग्यबाणों का हलाहल पान करना पड़ता है। अभिनव परिणीत वधू का दाम्पत्य जीवन संशयास्पद हो नीरस हो जाता है। निरन्तर सुखाभिलाषिणी वधू की आशा वसन्त-वाटिका पर तुषार पात होजाता है। वेदना की नीरदमाला उमड़ने लगती है, और परिणीता के कातर नेत्रों से अजस्र धारा निर्झरसम झरने लगती है।

कैलाश—आपका कथन युक्तिसंगत है। एक बाप के हृदय की भावना में अपनी कन्या की शुभ कामना का कितना अगाध दर्द छिपा रहता है, इसे कन्या का पिता ही अनुभव कर सकता है।

दौलत—आजकल सभी गगनचुम्बी अट्टालिकाओं पर अपनी कन्याओं का निवास चाहते हैं, सुन्दर वस्त्राभूषणों से अपनी तनया को साक्षात लक्ष्मी स्वरूप देखने की अभिलाषा रखते हैं। अनेक प्रकार के सुखद सुन्दर सुगम यानों पर उन्हें वन उपवन के आमोद, प्रमोद के स्थानों में विचरण करते हुए देखकर अपने को धन्य समझते हैं, किन्तु इस अनुपम सिद्धि के लिए वे दहेजरूपी साधन से क्यों मुख

मोड़ते हैं ?

जो कन्याएँ कलतक जीर्ण-शीर्ण झोपड़ियों में निर्वाह करती थीं। "दीरघ दाघ निदाघ" से सतप्त हो खेतो मे कठिन परिश्रम से खून को पानी कर डालती थीं, जानु भानु-कृशानु से यापनीय शीत काल में अहर्निश व्यापृत हो गृहकार्यों को सम्पादन करती हुई श्रान्त होजाती थीं, घर के टूटे फूटे बर्तनो को घिसते घिसते तथा चक्की पीसते पीसते करों का रेखाएँ अन्तर्लीन हो जाती थीं, उन कन्याओ को हर्म्यों में स्वामिनी का पद दिलाने के लिए एक निर्धन बाप क्या त्याग करता है ? देखिए बिना बलिदान के कोई भी विशिष्ट उच्चतम वस्तुप्राप्त भी तो नहीं हो सकती। जल की छोटी बूँदो को नभोमडल में मेघमण्डल का स्थान प्राप्त करने के लिए उन्हें अपने को निस्सीम तपाना और सुखाना पडता है। सिकताकण को भी कण कण में रत्नगर्भा वसुन्धरा का गौरवास्पद पद प्राप्त करने के लिए तिग्मरश्मि का तीव्रतपन, प्रचण्ड वात्या का विषमाघात, एवम् उद्दाम जलावर्त का भीषणतम कशाघात सहन करना पडता है।

कैलाश—अपने प्राणों की निधि पुत्री के लिए पिता यथाशक्ति कुछ भी उठा नहीं रखता। जो कन्या मनो मुग्धकारी लीलाओं से गृह प्रांगण की अनुपम शोभा बढ़ाती है स्वय हँसती है, खेलती है, उसको पिता जीवन संग्राम में विजयी बना सुखी बनाने की जितनी भी चिन्ता करे थोडी है। वह तो सदा यही कामना किया करता है कि मेरी कन्या सुखाकाश में चन्द्रकिरण बनकर चमकती रहे। एक बाप बड़े घर में सुयोग्य वर की पूजा में तपस्या में, आराधना में अपनी

कन्या को पुजारिन के रूप में देखना कौन पसन्द नहीं करेगा? कन्या शैशव पितृकुल में व्यतीत करती हुई कुल के आचार विचारों की शिक्षा ग्रहण करती हुई परिजनों को सुखित करती है, और जब वयस्का होने पर परिणीता बन अपने सारे सुखद भावों को सजाकर साथ ले एक नई दुनिया बसाने जाती है, उस समय उसे घर की छोटी से छोटी वस्तु का वियोग असह्य होता है। यहाँ तक कि पिंजड़े के पक्षियों को भी छोड़ते समय आँखों से अश्रुमौक्तिक बिखरने लगते हैं। शैशव की सुखद स्मृतियों को विस्मृत करने के लिए ही पिता अपनी कन्या को [illegible] से [illegible] उत्सुक रहता है, जिससे उसका मनोरंजन [illegible] हो।

हीरा—मुझे प्रसन्नता है कि आपके और [illegible] विचारों का [illegible] है। जहाँ कन्यादान [illegible] होता है [illegible] महिमा भी अधिक मानी गई है, [illegible] है। जो पिता अपनी कन्या को [illegible], कभी [illegible] चाहता हो, उसे इस दहेज [illegible] शुभानुष्ठान में [illegible] भी नहीं होना चाहिए।

कैलाश—पुत्र और कन्या [illegible] दो आँख हैं। पुत्र के लिए पिता आनन्द उसकी [illegible] है। इसमें [illegible] बनाने के लिए [illegible] में [illegible] मोड़ता है। पुत्र के [illegible] के लिए [illegible] करने [illegible] इत्यादि [illegible] कन्या के लिए [illegible] में सब कुछ करना चाहते हैं [illegible] उपयोग से [illegible] पूर्ण करने से ही [illegible]

में पिता अपने हार्दिक शुभाशीर्वादो, मंगलकामनाओं के अतिरिक्त दे ही क्या सकता है। असमर्थों का उद्धार भी तो आप जैसे समर्थ ही कर सकते हैं।

दौलत—आश्चर्य है। आप समझ कर भी नहीं समझ रहे है। दहेज का विषय वादविवाद का नहीं होता। यहाँ असमर्थता के उद्धार का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

सूक्ष्मदृष्टि से विचारें तो आपको पता लगेगा—जो कन्या कल तक एक गरीब बाप के गोत्र से पुकारी जाती थी, वही विवाह होने पर अपारधन की स्वामिनी बन प्रतिष्ठा प्राप्त करती है, अनेकानेक दास दासियो के सिर सदैव उसकी वन्दना करते हैं। इस प्रकार रंक से रानी बनना साधारण घटना नहीं है। इसके लिए रचनात्मक कार्य करना पडता है। केवल जबानी जमाखर्च से कुछ काम नहीं चलता। यदि आप मेरे विचारों से सहमत हों तो मुझे भी तैयार ही समझें, किन्तु आपकी असमर्थता की कोई औषध मेरे पास नहीं है।

कैलाश—आपकी सारी बातें मान्य हो सकती हैं, किन्तु एक साथ इतनी रकम दहेज के लिए सम्भवत एकत्र नहीं कर सकूँगा।

दौलत—मुझे भी दुःख के साथ प्रकट करना पडता है कि मैं आपके मनोरथ की सिद्धि में कुछ सहयोग न दे सका। यदि आप स्वीकार कर लेते तो मौका बडा सुन्दर था। प्रकाश अभी अभी आने वाला है। मैं उसे सब तरह से आपके लिए समझा बुझा कर तैयार कर लेता।

कैलाश—आपकी आज्ञा हो तो मैं भी इस विषय में प्रकाशबाबू से कुछ प्रार्थना करूँ।

दौलत—क्यों कष्ट करेंगे। आजकल के विद्यार्थी विवाह सम्बन्धी रीति-रिवाजों को क्या समझेंगे। आपके 'हाँ या ना' शब्द पर ही यह सम्बन्ध निर्भर है।

कैलाश—(उदासी से) यदि ऐसी बात है तो मुझे दहेज देकर ही विवाह सम्बन्ध करना स्वीकृत है।

दौलत—बात रहे--फरक न पड़ने पावे। विलम्ब न होवे। लग्न से दो दिन पूर्व ही यह निश्चित दहेज का [illegible] सहर्ष सम्पन्न हो जाना चाहिए।

कैलाश—आप निश्चिन्त रहें विश्वास रखें मेरी बात में कभी अन्तर नहीं आवेगा। विलम्ब भी नहीं होगा। सारी बातें आपकी इच्छा के अनुकूल ही होंगी।

(प्रणाम करने के पश्चात् कैलाश विदा होते हैं, किन्तु [illegible] प्रकाश को [illegible] उतर कर मकान में प्रवेश [illegible]। [illegible] आँखों से टकटकी लगाकर देखते हुए [illegible] और कदम [illegible]। प्रकाश भी [illegible] से देखते हुए गम्भीरता से घर में प्रवेश करते हैं, और पिता [illegible] देखने लगते हैं।)

प्रकाश—पिता जी। [illegible] मालूम पड़ते हैं।

मुद्रा मलीन क्यों दृष्टिगोचर हो रही थी।

दौलत—(वार्तालाप का प्रवाह बदलते हुये) संसार चिन्तागार है। अनेक प्रसगो मे आकृति चिन्ताग्रस्त हो ही जाती है। विशेषत विवाह सम्बन्ध में तो उसका उदय अवश्य ही होता है। वहां परेशानियाँ तो पग पग पर कमर कसकर तैयार ही रहती है।

प्रकाश—ऐसा क्यो होता है?

दौलत—यह तो सामाजिक विज्ञान है इसे अभी तुम नहीं समझ पावोगे? कन्याओ के विवह के लिए दहेज की एक आवश्यक धार्मिक रीति पूरी की जाती है, जिसमे किसी को कुछ कष्ट का अनुभव होने लगता है।

प्रकाश—पिता जी। मैं तो दहेज को बिलकुल ही पसन्द नहीं करता। मैं आपसे भी प्रार्थना करूँगा कि आपको भी इस नवयुग में दहेज का विचार त्याग देना ही चाहिए?

दौलत—अभिजात वशो में माता पिता ही अपने बालको का विवाह सम्बन्ध पक्का करते है, उनके निश्चय मे कोई विक्षेप नहीं करता है। कुलीन बालक गुरुजनों के आदेश की प्रतीक्षा करते रहते है। अपनी अनुमति स्वतन्त्रता से व्यक्त नहीं किया करते।

प्रकाश—पिताजी। धृष्टता क्षमा करें। मुझे उनकी मुखाकृति से अब भी समवेदना है। वे अश्रुपूर्ण आंखें भी विस्मृत नहीं हो रही हैं। यह दहेज एक ताप है, सताप है, अभिशाप है। कर्त्तव्य के सततोपासकों के लिए महापाप है। और निर्धन भद्र समाज का एकमात्र विलाप है।

दौलत—तुम सुयोग्य होगये हो। यह तुम्हें ज्ञात ही होगा—समझदार

अपने परिचित विषय पर ही बोलते है। कभी विषयान्तर में नहीं जाते।

प्रकाश—मैं इस दहेज की प्रबल धार में जीवन की सुन्दर भित्ति को भूमिसात् नहीं करना चाहता। मैं तो दहेज के इकरार पर यह कार्य करने की अपेक्षा आजीवन अविवाहित . . .

दौलत—मैंने तुम्हें जन्म दिया है। इसका तुम्हें ख्याल होना चाहिए। तुम किस बल पर अहंकार की आधार शिला पर स्वतन्त्रता का काल्पनिक किला बनाने जा रहे हो। क्यों इस प्रकार छोटे मुंह बड़ी बात कर रहे हो। मैंने तुम्हें योग्य बनाने के लिए कितना श्रम किया है? पानी के समान पैसा, धनराशि का व्यय किया है। याद रखो मेरे विचारों का विरोध करना, खंडन करना, सामना करना मोम के तुरंग पर सवार होकर पावक की सुरंग में प्रवेश करना है। बिजली को तलवार को कर में ग्रहण करना है? तुम अभी नादान हो। तुमने बी० ए० की परीक्षा पास की है। समाज व रीति रिवाजों व परीक्षण में उत्तीर्ण होने के लिए अभी लोहे के चने चबाने बाकी हैं। जहरीले घूँट हँसते हँसते पीने पड़ेंगे। संसार में जितनी भी परीक्षाएँ हैं उनमें यदि सर्वोत्तम, विकट और कठिन परीक्षा कोई है, तो जाति, समाज और देश की परीक्षा है। इस परीक्षण में जो मनुष्य सफल होते हैं, वे ही इस संसार रूपी अभिनयशाला में अपने को श्रेष्ठ पात्र सिद्ध कर सकते हैं। (प्रकाश चुपचाप क्रोध के साथ अपने विश्राम कक्ष में चले जाते हैं)

(पटाक्षेप)

तृतीय दृश्य

स्थान—कैलाशबाबू का घर

समय—अपराह्न

शील शौच शान्ति,
दाक्षिण्य मधुरता कुले जन्म ।
न विराजन्ति हि सर्वे,
वित्तविहीनस्य पुरुषस्य ।

(शील, पवित्रता, शान्ति, उदारता, मधुरता कुलीनता ये सभी गुण गरीबों की शोभा नहीं बढाते। निर्धनता मनुष्य के लिए एक घोर अभिशाप है। इस प्रकार सलिलशून्य सरोवर को पशु, पत्रावलि-विहीन पादपराजि को पक्षी, मधुर सुगन्ध मकरन्दरहित निरम्भ अम्भोज को भ्रमरावलि भूलकर भी अपने मानसाकाश में स्मृति-रेखा खचित करने नहीं देते ।

प्रकाश में सतत सलग्न रहकर एकात्म-भावेन साथ देनेवाली मनुष्य की छाया भी आपत्तिमिस्रा मे उसे भाग्य भरोसे छोड़कर अन्तर्हित होजाती है ।

कैलाशबाबू का किराये का कच्चा घर भी निर्जन स्थान मे है । चारो ओर शुष्कविटप अस्थिमात्रावशेष ककाल से प्रतीत होते हैं। प्रचण्डवात्या से उद्विग्न कोमलकिसलय वल्लरी, पीत पल्लवों को अश्रुलडी सी पृथ्वी पर रह रह कर सजा रही है। गृह के लघु वातायन से हिरणी सी भयभीत, सशंकित देखती हुई शोभा और

चारपाई पर लेट जाते हैं। शोभा समीप जाकर विनम्र शब्दों में जिज्ञासा करती है। और आशा बाहर द्वार पर कान लगा कर खड़ी हो जाती है।)

शोभा—जिस शुभ कार्य के लिए पधारे थे, क्या उसमें सफलता मिली।

कैलाश—हाँ मि · ·· ·· · ली · · ·

शोभा – फिर क्या कारण है। जो आपने भोजन रुचि से नहीं किया ?

कैलाश—कोई विशेष कारण तो है नहीं ?

शोभा—फिर आशा के विवाह के लिए कोनसा मुहुर्त्त निश्चित हुआ ?

कैलाश—सारी बातें निश्चित कर चुका हूँ प्रभु की कृपा से सब ठीक होगा ?

शोभा—तब उदासी का क्या कारण है ?

कैलाश—यों ही कुछ नहीं। केवल दहे·· ··ज।

शोभा—(चोंक कर) दहेज। फिर कितना।

कैलाश—दशहजार। वह भी नकद ॥

शोभा—(अवाक् होकर) दशहजार। वह भी नकद ॥ फिर सफलता कैसी।

कैलाश—मैंने उसे स्वीकृत किया है।

शोभा—इतने रुपये कहाँ मिलेंगे।

कैलाश—कर्जा लेना होगा।

शोभा—इतना कर्ज कौन देगा।

कैलाश—अधिक सूद पर मिल ही जायगा।

शोभा—कर्जा कैसे चुकाया जायगा।

कैलाश—कठिन किस्तों से ?

शोभा—इस से दहेज से तो अपना सारा जीवन नष्ट हो जायगा।

कैलाश—मेरी बेटी आशा तो सुखी रहेगी।

शोभा—(दीन स्वरों में) जीवनधन! हम लोग इस कष्टसाध्य दहेज के कारण दर दर के भिखारी हो जायेंगे। वृद्धावस्था में ऋण लेना अच्छा नहीं होता। उसकी चिन्ता तुषाग्नि के समान अन्तर को दग्ध करती रहेगी। जीवन की नलि काटने वाली इस माँग को आपने स्वीकार ही क्यों किया? आपने अपनी आशा के लिए सर्वस्व बलिदान का संकल्प कर लिया है, परन्तु [illegible] संकल्प के पूर्व परिस्थिति तथा शक्ति का भी ख्याल करना चाहिए था।

कैलाश—यह मेरा दृढ़ संकल्प है। इस पर यदि मैं बलिदान भी हो जाऊँगा तो मेरी आत्मा को परम सन्तोष की प्राप्ति होगी। इस दहेज की दुखद [illegible] में जल होकर भी संतान को बचा लेना चाहता हूँ, कि एक [illegible] आदमी [illegible] शुभ कामनाओं के लिए खर्च कर [illegible] क्या कर सकता है। अगर एक पिता अपनी कन्या को सुखी बनाने के लिए दहेज के विकराल कराल [illegible] की [illegible] के लिए [illegible] सकता है, तो क्या एक गरीब बाप अपनी प्यारी पुत्री के लिए अधिक से अधिक त्याग कर(?) आत्मोत्सर्ग(?) करके कठिन [illegible] से [illegible] करने से पराङ्मुख कैसे हो सकता है?

शोभा—आपके इस दृढ़ निश्चय से हमें भविष्य में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा।

कैलाश—[illegible] के इस जागरित प्रगति और युग में [illegible] चारों ओर [illegible] [illegible] है। [illegible] से [illegible] शक्ति का [illegible] से [illegible] है। [illegible]

पर ऐसा कोई निन्द्यतम शेष कार्य नहीं है, जो अवद्य दहेज के कारण न हो सकता हो। इसी के कारण कहीं गुणवती, सुन्दर, सुशील सुमन सौरभ सम मोहक कन्याएँ हलाहल पान करती हुई अपनी सरस मादकता-पूर्ण जीवनप्याली को अपने ही हाथों चकनाचूर कर देती हैं। कहीं कन्या का आदर्श पिता घर से निकल दर दर की ठोकरें खाता हुआ चिन्ता की चिरचिता मे दग्ध होता दृष्टिगोचर होता है। कहीं रक्षाबन्धन के माङ्गलिक सूत्रों में अपनी शुभकामना पिरोनेवाली बहन का परम पुरुषार्थी भाई अपनी प्यारी बहन के सम्बन्ध के लिए स्वार्थ-लोलुप मनुष्यों के पैरो मे अपने स्वाभिमान, गौरव और वंशागत धवल कीर्ति को झुकाकर कलंकित करता है, और उनकी हृदय-विदारक मारक तिरस्कारवृत्ति की बलिवेदी पर अपने को उपहृत करता दृष्टिगोचर होता है।

शोभा—इस भयानक बलिदान पथ का स्मरण करते हृदय काँपने लगता है। मनस्वी जीवन से अनिच्छा होने लगती है।

कैलाश—इस विनाशक दहेज ने मानव संसार के दैवीसम्पत्सम्पन्न सरस भावुक हृदय को ही परिवर्तित कर दिया है। बलबुद्धि विद्या के भंडार शुभचिन्तकों के सुविचारों तक को पलट दिया। समाज के शान्तिमय सुखद अमृतपूर्ण कनकघट को उलट दिया। यह दहेज, चेतना-सम्पन्न युग में भी माता की आशा, पिता की अभिलाषा, जाति की प्रभा, समाज की कान्तरश्मि, देश की सरस सुषमा कन्या का सर्वस्व सहस्रकरों से अट्टहास के साथ अपहरण करता परिलक्षित हो रहा है।

(अपने पिता के मर्मस्पर्शी वचनों को सुनकर आशा की

आँखों से अविरल अश्रु प्रवाहित होने लगते हैं। वह उसे पोंछती हुई पिता के सम्मुख आकर खडी होती है। और गम्भीरता से उदास मुख को निर्निमेष देखने लगती है। कैलाश आशा को अपनी चारपाई के समीप ही बैठा लेते हैं। सिर पर स्पर्श करते उसे सितार पर एक भजन सुनाने को कहते हैं। पिता की आज्ञा शिरोधार्य कर आशा भजन गायन करने लगती है। आशा की माता भी निकटस्थ होकर बड़े प्रेम से भजन सुनती है।)

हरि तुम हरो जन की पीर।
द्रौपदी की लाज राखी तुरत बढ़ायो चीर॥
भक्त कारन रूप नरहरि धर्यो आप शरीर।
हिरनाकुस मार लीन्हो धर्यो नाहिन धीर॥
बूड़तो गजराज राखो कियो बाहर नीर।
दासी "मीरा" लाल गिरधर चरन कमल पर सीर॥

कैलाश—(मस्तक पर करस्पर्श करते) आशा! तुमने कितना मधुर गाया है?

(आशा की आँखों में हर्ष के अश्रु का उद्रेक हो जाता है। कैलाश वहाँ से बाहर निकल कर टहलने लगते हैं।)

आशा—माँ! आज पिता जी को क्या हो गया है? वे चिन्तित जान पड़ते हैं? मैंने जीवन में उन्हें इतना व्यथित कभी नहीं पाया। भोजन के समय उनकी उसमें अभिरुचि तक नहीं थी।

शोभा—कोई विशेष बात नहीं है।

आशा—है क्यों नहीं! आपको अवश्य बतानी होगी।

शोभा—बात तो दहेज के सम्बन्ध की है। तुम्हारा विवाह जो करना है।

उसमें जो दहेज अपेक्षित हो रहा है उसका भारवहन तुम्हारे पिता को सामर्थ्य से बाहर है।

आशा—माँ! ऐसे विवाह की क्या आवश्यकता है ?

शोभा—इतना दहेज देने पर भी विवाह अनावश्यक कैसे हो सकता है ?

आशा—यह शादी है। या जीवन की बरबादी। एक पुत्री अपने पूज्य पिता का जीवन बरबाद कैसे कर सकती है। नादान बालक भी अपने कुल की बरबादी का कारण नहीं बनना चाहता। इस दहेज रूपी फाँसी के तख्ते पर पिता जी को लटकते देखने की अपेक्षा आजीवन कुमारी रहना अधिक श्रेयस्कर समझती हूं। एक कुलीन कन्या ऐसे विवाह की अमृतप्याली के स्थान पर हलाहल पान को चिर-शान्ति के लिए अतिशय उपयुक्त समझती है। यह विवाह नहीं, अपितु स्नेह के स्थान पर शूल है—कुसुमों के स्थान पर कांटे हैं। प्रेम के स्थान पर यन्त्रणा है, उन्नत जीवन के स्थान पर पतित जीवन की पराकाष्ठा है।

शोभा—तुम्हें पिता की आज्ञा का पालन ही शोभाजनक है। इसी में तुम्हारा हित है, कल्याण है, मंगल है।

आशा—नहीं माताजी! इस दहेज पर पाप की मलीन घृणास्पद छाया मँडरा रही है। इसके आदान प्रदान में कालरात्रि का निविड विलास है। ऐसे अनैतिक जीवन जगत से पृथक रहना ही सुखद जीवन की प्रकाशमयी झांकी है।

शोभा—तुम्हें गुरुजनों के सम्मुख हठ करना शोभा नहीं देता। वे जो भी करते हैं, सब तुम्हारे ही सुखसाधन के लिए।

आशा—(करुण स्वरों में) माता जी! मैं आप लोगों की आज्ञा से

जीवन का नेह त्याग सकती हूँ, गेह त्याग सकती हूँ, देह त्याग सकती हूँ, समय पर सर्वस्व त्याग सकती हूँ, किन्तु पूज्य पिता जी को दहेज की बलिवेदी पर हुत होने के लिए कदापि नहीं त्याग सकती। पिताजी जो कुछ करने जा रहे है, उसे मेरा हृदय जानता है।

अन्यदेश मानवो की जन्म-भूमि हैं, किन्तु हमारा सनातन सास्कृतिकगौरवास्पद प्रबुद्ध देश मानवता की भी जन्मभूमि है। यहाँ एक पिता जितना अपनी पुत्री के लिए, एक भाई जितना अपनी भगिनी के लिए अनुपमेय आदर्श त्याग करता है, वह विश्व के लिए अनूठा अनुकरणीय है, किन्तु इस दहेज की स्वार्थ लिप्सा से इसका स्वरूप क्या से क्या होगया है ?

शोभा--बेटी। अपने कर्त्तव्य पालन के लिए मनुष्य को सब कुछ करना पड़ता है। सन्तान का प्यार जगत मे अतीव आकर्षक होता है, जिसे मनुष्य तो क्या-साधारण पशु तक त्यागने मे असमर्थ हैं।

आशा--आप मेरी ओर से पिताजी को अवश्य निवेदित करें कि वे मेरे लिए दहेज के कंटकाकीर्ण-पथ पर चलने का कष्ट न करें। यह पिता का साश्रुसलाप, माता का विप्लव संताप, और भाई का निर्मम विलाप है। मैं इसे किसी प्रकार भी उपादेय नहीं समझ सकती।

जब एक पुत्र अपने पितृचरणो की पूजा, मातृपाद-वन्दना, आजीवन करता है, तथा प्रेम से पालन करता है, वृद्धावस्था में "बुढ़ापे की लकड़ी" बनता है। अन्त मे अनेकदिवसो तक पुष्पाञ्जलि तथा दिवगत होने पर श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता है, तब बाप की बेटी इस क्रूर निर्दय दहेज पिशाच के द्वारा पिता की निर्मम हत्या कैसे देख सकती है? मैं अनुराग से

आजन्म आपकी सेवा करूँगी। आपके दुःख-सुख मे समभागी होकर जीवन यापन करूँगी, किन्तु जब तक शरीर में एक भी श्वास अवशिष्ट रहेगा, दहेज की क्रूर लीला के सम्मुख आप को कभी अवनत मस्तक न होने दूँगी।

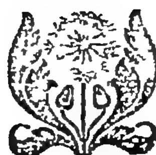
शोभा—आवेश मे बावली बनकर व्यर्थ की बाते मत करो। अपने कुल की मर्यादा का ख्याल करो।

आशा—(भावुक मुद्रा में) भारतीयादर्श मे कन्या के लिये कितना अनुपम त्याग किया जाता है। एक निर्धन पिता प्रतिदिन ग्रीष्म की सतापक धूप में, शिशिर की सर्दी मे, कार्यव्यापृत हो एक एक पैसा सग्रह कर अपनी कन्या के हाथ पीले करने में हँस हँस कर व्यय करते अपार आनन्द का अनुभव करता है। निरीह भ्राता शेरों की माँद में गुजरते, महासागर में गोते लगाते, दुर्गमघाटियों को पार करते, आजीविका साधन से जो कुछ भी उपार्जित कर सचित कर पाता है, उसे अपनी बहन के विवाह में व्यय कर अनिवर्चनीय आनन्द से परम सन्तोप प्राप्त करता है। एक दलित कृषक भी एक समय भोजन कर जो कुछ संचय कर पाता है, उसे अपनी कन्या के विवाह में व्यय कर अपनी साध पूरी करता है। ऐसे प्रियजन परिवार का प्यार कभी भुलाने पर भी नहीं भुलाया जा सकता। मैं दीन-बन्धु दयासिन्धु दीनानाथ से प्रार्थना करती हूं कि वे मेरे पिताजी को समग्र सुखों को निगलने वाले, भूतल को रसातल पहुँचाने वाले, महाविकराल दहेज का सामना करने के लिए अपूर्व शक्ति-प्रदान करेंगे। (आशा प्रभु से प्रार्थना करती है।)

❀ राखो मोरी लाज, आई शरण तिहारी ❀

तुम जानत हो अन्तर्यामी, जीवन के रखवारे।
लोभ मोह ने सब जग घेरो, सब स्वारथ मतवारे॥
शान्त जगत पर काली घटा है, गरजत बादल कारे।
कन्या गृहलक्ष्मी कहलावे, भटकत द्वारे द्वारे॥
रक्षक भक्षक, बन गये बन्धू, फिरते हाथ पसारे।
है दहेज दावाग्नी भड़की, झुलस रहे हैं सारे॥
तीर किनारे नैया डूबत, गोधर्न के रखवारे।

(पटाक्षेप)



चतुर्थ दृश्य

स्थान—दौलतराम का मकान

समय—प्रात'

(आज दौलतराम के मकान पर माङ्गलिक वन्दनवार; झंडियाँ फहरा रही हैं। बाजे बज रहे हैं। शहनाइयों की सुमधुर चित्ताकर्षक ध्वनि सबको मुग्ध कररही है। सभी परिजनों एवं भृत्यों की आकृति प्रसन्न है। किन्तु कैलाश ही केवल उदासीन दिखाई दे रहे हैं, जो अभी अभी द्वार पर आकर खडे हुए हैं। उनकी उदासी का कारण सम्भवत दहेज का प्रबन्ध न होना ही हो सकता है। चपरासी उन्हें नमन करता है। भीतर जाकर दौलतराम जी को उनके आगमन की सूचना देता है। कुछ क्षण बाद ही चपरासी अन्दर से बाहर आकर कैलाशबाबू को सादर अन्दर लेजाता है। कैलाशबाबू दौलतराम को करबद्ध जयगोपाल करने के पश्चात् उनके सम्मुख गद्दे पर बैठ जाते हैं। उनके बगल के कमरे में प्रकाशबाबू कुर्सी पर बैठे "दहेज" नाम का नाटक पढ रहे हैं।)

कैलाश—शाहजी। रुपया आपको अवश्य जमा करा दूँगा, लेकिन थोडा विलम्ब होगा। आप विश्वास रखें। कैलाश कभी अपने वचन से नहीं हट सकता। मैं आपसे मिथ्या भाषण नहीं कर रहा हूँ। आपके सम्मुख की हुई प्रतिज्ञा अवश्य पूरी करूँगा

दौलत—(कुटिल भृकुटि से) यदि आपको ये ही शब्द 'दहेज' में देने थे, तो किस मुँह से वादा करने गये थे!

सम्बन्ध के श्री गणेश में ही जिनके वचन कच्चे सूत के समान सिद्ध होते हों, वे जन्म जन्मान्तर के सम्बन्ध को प्रेम रज्जु से किस भाँति दृढ़ बना सकेंगे ?

कैलाशबाबू ! आप विरोधरूपी शेष के सहस्रफणों की विकराल घटाटोप छाया में शयन का उपक्रम कर रहे हैं। इस मंगल-विधान की स्वर्णिम वेला में सुखद प्रभाती की जगह अनवसर विहाग छेड़ रहे हैं। सुखद जलद के रत्नमुकुट सम सद्भावों के शतरंगी इन्द्रधनुष को वात्यावर्त से धूमिल एवं अदर्शनीय बना रहे हैं। पारस्परिक सम्बन्ध गिरि से झर झर प्रवहमान स्नेह निर्झर को लू संतप्त मरुधरा में ले जाकर सुखा रहे हैं।

याद रहे ध्रुव नक्षत्र अपने स्थान को छोड़ सकता है। सूर्य प्राची के स्नेह पाश को तोड़कर प्रतीची के स्नेह पावन पाश में बद्ध हो उदित हो सकता है, परम सरोवर सलिल के स्नेह को त्यागकर जलजात हिमगिरि के तुषारतल पर खिल सकता है, किन्तु दौलतराम अपने पूर्व निश्चित निर्णय से कभी टस से मस नहीं हो सकता।

कैलाश—(दीन स्वर से) आप धनकुबेर हैं, लक्ष्मी पुत्र हैं, मुझे क्षमा करें। मैं आपकी शरण में हूँ। अब आप ही मेरी इज्जत हैं। मेरे जीवन के आशा केन्द्र हैं।

दौलत—दहेज में क्षमा और इज्जत बोलकर कोई वस्तु नहीं होती। आखिर मामला तो केवल दस हजार का है। जिसके लिए आप पुरुषार्थी पुरुष होकर दयनीय अबला की भाँति करुण क्रन्दन पूर्ण अनुनय कर रहे हैं। दहेज न देने के लिए कितना करुणाभाग पूर्ण नाटक रच रहे हैं। इस ऊँची दूकान के फीके पकवान का हमें स्वप्न

में भी कभी ध्यान नहीं था।

कैलाश—यह करुण क्रन्दन नहीं है। न करुणाभाव पूर्ण नाटकीय ढंग ही है। अपितु यह अन्त:करण की करुण पुकार है। परिस्थितियों की मार है, एक दृढ़-प्रतिज्ञ व्यक्ति के हृदय के उद्गार हैं। आप मुँह माँगे दहेज की रकम का सूद लगा लें, मुझे कुछ अवकाश मिलने पर मैं उसका अवश्य शीघ्र प्रबन्ध कर दूँगा।

दौलत—देखिये। ये मेरे आखिरी शब्द हैं। यदि कल मध्याह्न तक वादे के अनुसार आप रकम न दे सकेंगे तो प्रकाश का सम्बन्ध आपकी आशा को निराशा में परिवर्तित करते हुए किसी और के साथ कर दिया जायगा।

कैलाश—(घुटनों के बल बैठकर हाथ जोड़ते हुए)

दया करें, क्षमा करें। ऐसे हृदयविदारक कठोर अपशकुनमय शब्द मुँह से न निकालें। दौलतरामजी। संसार हमेशा अपने निर्माण और ध्वंस कार्य में हँसता और रोता रहेगा, किन्तु आपकी दया के अभाव में कैलाश शव के समान चिरशान्ति की गोद में करवट लेकर सदा के लिए समा जायगा। मैं आपकी गाय हूँ। मेरी गर्दन आपके समर्थ चरणों में है। जरा मेरे कुलीन घराने की इज्जत की ओर भी विचार करें। मेरा विश्वास, मेरी प्रत्येक श्वास समझें।

दौलत—जिनके वचनों की कीमत नहीं उनका घराना क्या? उनकी इज्जत कैसी? उन पर दया करना कोई महत्त्व नहीं रखता। (सोच मुद्रा में) कुछ समझ में नहीं आता, आखिर जिसका डर था वही होकर रहा।

(अपर प्रकोष्ठ में बैठा प्रकाश इनकी सारी बातें सुनकर व्यग्र

हो जाता है और वहाँ वेग मे आजाता है; और कैलाशबाबू का चरण-स्पर्श करता है)

कैलाश—पुत्र ! चिरजीवी हो । प्रकाशबाबू ? आपने हमारी सारी बातें शायद सुन ली हैं । आप पढ़े लिखे विचारशील युवक हैं · · · ··

प्रकाश—आप कोई दु:ख न करें पुन चार बजे सायकाल यहाँ पधारने का कष्ट करें तो बडी कृपा होगी ।

(कैलाशबाबू सबको "जयराम जी" करते हुए कमरे मे बाहर होते हैं, प्रकाश दौलतराम का चरणस्पर्श कर अवनत मस्तक हो उनके सम्मुख खड़ा हो जाता है)

दौलत—प्रकाश ! यह क्या कर रहे हो ?

प्रकाश—पिताजी ! आप मुझ पर दया कर दहेज का कठोर दृढ़-सकल्प हृदय से हटा दें । मैं आज तक आपके सम्मुख कभी एक शब्द तक निकालना पसन्द नहीं करता था, लेकिन मजबूरी के कारण आज की परिस्थिति देखकर मुझे अपने सारे विचार आपके सम्मुख प्रकट करने पड रहे है ।

दहेज की दिल दहलाने वाली बातें सुनकर तो मुझे महसूस होने लगा है कि वर्तमान युग की विवाह पद्धति एक भयकर अपराध है । कन्या के पिता को बरातियों का सत्कार,एव सारी रीति रिवाजो का यथावत् पालन करने पर भी दहेज की चक्की में पीस पीस कर चूरा बना देना मानवता की अपूर्व सम्पन्न प्रतिभा सम्पत्ति को सदा के लिए नष्ट कर देना है । यह प्रथा कुलीन घराने की शोभा कदापि नहीं कही जा सकती । ऐसे विवाह को जन्म जन्मान्तर का सम्बन्ध कहकर पुकारना कहाँ तक न्याय सगत कहा जा सकता

है ? इस प्रकार जबरन दहेज का लेना धार्मिक कृत्य नही, अत्याचार है। आज स्वार्थ के बाजार में सुशील एव परमकुलीन कन्याओ को पशु सम्पत्ति समझ कर दहेज के मुद्रा–विनिमय से खरीदा बेचा जाता है। जो सभ्य-मानव समाज के उच्च आदर्श के लिए अमिट कलक है। आप मेरी ढिठाई क्षमा करें, और मेरी प्रार्थना स्वीकार करते हुए दहेज प्रथा को जड़मूल से उखाड़ने का मुझे आदेश दें।

दौलत—प्रकाश। थोडे होश में आकर बातें करो। अभी तुम नादान हो। इस विषय मे कुछ कहने के अधिकारी नही। थोड़ा भविष्य के जीवन का भी ख्याल करो। केवल भावनाओं की सुकुमार सुकोमल तन्तु अवलि पर जीवन सुख का बोझल झूला डालने की क्लिष्ट कल्पना मत करो।

देखो। गुरुजनो की आज्ञा शिरोधार्य करने मे ही युवको का हित है। किसी ने सच कहा है—

"जवानी में जोश होता है, होश नहीं होता"

प्रकाश--वैवाहिक जीवन का प्राथमिक उल्लास ही भविष्य मे मगल और सफलता को आमन्त्रित करता है, किन्तु स्वार्थसम्पन्न, परिणाम में परम भयावह दहेज उसे सफल नहीं होने देता। आप उसे स्वीकार कर आपके "प्रकाश" को कलक कालिमा के कारागार में हमेशा के लिए बन्द न करें।

मानव जीवन मे सद्व्यवहार वसन्तऋतु है। उसमे मान की माधवी छटा छिटकती है। उस मान की निर्मम हत्या करने वाली इस दूषित दहेज प्रथा का समर्थन करना अशिष्टता है।

उससे मानवता मिटती है। विविध कुरीतियो के तूफान उठने

लगते हैं। इसे चौथ का चन्द्र समझ कर त्याग दें। जिस दिन हमारे घर मे विवाह रचाया जायगा। हमें भी ऐसी जहरीली घूँटे बरबस कंठो से नीचे उतारनी पड़ेंगी। बराबर के स्वजन, सज्जन, प्रिय-परिजनों को इस प्रकार नीचा दिखाना मानव हृदय मन्दिर में देवताओं को अन्तर्हित कर दानवो का आह्वान करना है। सर्वसाधारण के हृदय में अशान्ति का आन्दोलन सर्जन करना है।

दौलत—बेटा! दहेज शास्त्रों की परम्परागत प्रथा है। इसका होना विवाह की अतुल शोभा है। समाज की रूढ़ियाँ भी शास्त्र का अंग मानी गयी है। इसलिए लोग इनको पालन करने में कभी पीछे नहीं हटते।

प्रकाश—प्राचीन रूढ़ियो का मान अवश्य होना चाहिये। किन्तु प्राचीन विकृत रूढ़ियो का खंडन एवं मूल मे सुधार होना परमावश्यक है। धर्म के आवरण मे यह स्वार्थ परायणता कब तक छिपी रह सकती है।

इस दहेज के अमूल्य अलंकारो से स्वार्थरोगाक्रान्त काय की कमनीयता कभी बढ़ नहीं सकती। दहेज बुरा नहीं है, किन्तु विवाह चर्चा के आरंभ मे ही नियत कराकर अनिच्छा से ग्रहण करना अनूठी बचकता है। दिन दहाड़े दहेज का डंका बजाना चंगेजखाँ, तैमूरलंग, नादिरशाह की लूटमार से भी ज्यादा भयानक जान पड़ता है। दो सम्बन्धियों के बीच सच्चा पवित्र प्रेम दिव्य ज्योति का प्रकाश बनकर सदैव प्रशस्त उन्नतिपथ का प्रदर्शन करता है।

यदि आप कैलाशबाबू को बिना दहेज कलंक लगाने की उदारता निश्चित करलें, तो आपकी यह स्नेह सूचना कैलाशबाबू के

शुष्क शून्य धरा पर सहज अपार प्रसन्नता पारावार को उद्वेलित कर देगी।

पिताजी! एक रोते हुए हृदय को हँसा देना हृदय में सहस्रों स्वर्गों का निर्माण करना है। मनुष्य को मानवता के नाते किसी क्षण भी शील और विनय के नियमो का उल्लंघन नहीं करना चाहिये।

निशा दिवा भी सर्वत्र विपदा सम्पदा चक्रनेमिक्रम से परिभ्रमण करती रहती है। इसलिए मनुष्य को जीवन मे समय पर अपेक्षित सहयोग देकर शुभ कामना उपलब्ध करनी चाहिये। विपदा में दूसरों को सहयोग देना विश्व में एकता की इकाई है। आज दहेज रूपी मदिरा को स्वार्थी जन पी पी कर मतवाले, ज्ञानशून्य, बेसुध होरहे हैं।

दौलत—प्यारे पुत्र! यद्यपि तुम्हारी सारी बातें सगत हैं, किन्तु कंजूसराजू से सारी बातें तय होगयी हैं। अब इसमें परिवर्तन करना अनुचित एव पराजय होगी।

प्रकाश—सन्मार्ग में झुकने का नाम विजय है। नीति वाक्य है.—

नमन्ति फलिनो वृक्षा.।
नमन्ति गुणिनो जना.॥

पिताजी! आपका मुझपर अटूट स्नेह है। आपने मुझे सब प्रकार से शिक्षित कर योग्य बनाया है। मैं आपके विचारो से कदापि विमुख नहीं होसकता, परन्तु वर्तमान में फैली दहेज जैसी समाज सघातक कुरीति का समूलोच्छेदन करना आवश्यक युग धर्म समझता हूं।

मैं श्रीचरणों में यह निवेदन करना चाहता हूं कि वर्तमान दहेज प्रथा अपने घर मे कदापि स्थान न पावे तो अच्छा है, और जिस किसी घर मे इसकी दुकानदारी हो, वहां भी इसका पूर्णरूप से विशाल सवटनात्मक शक्ति क साथ मातत्य विरोध किया जावे।

आप मेरी प्रार्थना स्वीकार करते हुए कैलाशबाबू को यह शुभ सन्देश भिजवादें, कि हम लोग दहेज के रूप मे कोई भी वस्तु स्वीकार नही करेंगे। इस अविलम्ब परिहार्य दहेज के विरोध का प्रथम कदम अपने घर से उठाना सफलता सूचक होगा। आशा है। हमें इसमें सफलता अवश्य प्राप्त होगी।

(दौलतराम प्रकाश को हृदय से लगाते हैं। चपरासी कैलाशबाबू के आगमन की सूचना देता है। प्रकाश शीघ्रता से कैलाशबाबू के पास जाकर बडे सम्मान के साथ पिताजी के पास उन्हें लेआता है, और स्वय विश्रामकक्ष मे चला जाता है।)

कलाश—(नमन के पश्चात्) प्रभु की पूर्ण कृपा, तथा आपकी शुभ कामना से मैंने दहेज की सारी रकम का प्रबन्ध कर लिया है।

दौलत—(मलीन मुद्रा मे) भाग्य के झुकाने पर भी धैर्य और मर्यादा ने आपको झुकने नहीं दिया। सच है —

"जाको राखे साइयाँ,
मार सकै ना कोय"।

कैलाश—आज मुझे बडी प्रसन्नता है कि समय पर मुँह मांगे व्याज पर रुपये मिल गये। जिससे मैं अपने वचन की रक्षा कर सकूँगा।

दौलत—आपकी धैर्य रूपी शीतलता ने स्वार्थ के जलते लोहे पर विजय प्राप्त की है।

कैलाश—(नोटों का बंडल सम्मुख रखते हुए) यह मेरी दहेज की तुच्छ भेंट स्वीकार करें।

दौलत—(इनकार करते हुए) आपको व्यर्थ कष्ट हुआ ?

कैलाश—(आश्चर्य से) परन्तु ?

दौलत—इसकी आवश्यकता नहीं।

कैलाश—(चौकन्ना होकर) किन्तु ?

दौलत—यह उचित नहीं है।

कैलाश—(सोच मुद्रा में) तो भी ?

दौलत—ऐसा नहीं होगा।

कैलाश—(विनम्रता से) फिर भी ?

दौलत—यह अशोभनीय है।

कैलाश—यह रीति रिवाज का प्रसग है। इसे अस्वीकृत करना उचित नहीं।

दौलत—कैलाशबाबू! मेरे विचारो से आपको जो भी यन्त्रणा मिली; क्षमा करें। प्रेम की पवित्रता की परिभाषा भिन्न होती है। अब दहेज की अधित्यका पर स्वार्थ का ज्वालामुखी न फूट सकेगा।

कैलाश—लेकिन विवाह की शोभा का भी ध्यान रखना आवश्यक है।

दौलत—मुझे दुख है कि आपके इतने विषाद का कारण मैं बना। आपकी सज्जनता ने मेरे शून्य हृदय मे सच्चे स्नेह का सचार कर दिया। मेरा स्वार्थी स्वप्न भग होचुका है। मेरे हृदयतल की भूमि अब कंटकाकीर्ण कठोर और कंकरीली न रह सकेगी। मेरे विचारो के सुन्दर सुगन्धित सुमन अब स्वार्थ के तूफान में सिद्धान्त की शाखाओं से टूटकर बिखरने न पावेंगे।

विराट् आकाशमुखी दुर्धर्ष दहेज दानव समाज के सुख शान्ति स्वरूप सदालोक को पी पी कर काला मतवाला नहीं बन सकेगा।

लोगों के पश्चात्ताप और विषाद रूपी अन्धकार से आज समस्त समाज की उज्ज्वल मान मर्यादा प्रतिष्ठा धूमायित न हो सकेगी।

कैलाश—यह आप क्या कह रहे है ?

दौलत—यह सुनकर आपको परम प्रसन्नता होगी कि आपके प्रकाश ने यह प्रण किया है कि अपने वर मे अनुचित दहेज को कहीं भी स्थान नहीं दिया जायगा। साथ ही साथ अन्य जगहो पर भी इस प्रथा को प्रश्रय नहीं मिलना चाहिये। इसका प्रथम मंगल विधान प्रकाश के विवाह से ही आरभ होरहा है। अब दहेज निमित्त आनीत द्रव्य-राशि की आवश्यकता नहीं रह गई। आप निश्चिन्त, सानन्द विवाह की तैयारियाँ करें, कष्टप्रद साधनों को कदापि स्थान न देवे।

वास्तव में हम दोनो एक ही है। लोगो की दृष्टि मे भिन्न नजर आते है। हम लोगो मे एक का कष्ट दूसरे को सहन न होना चाहिये। मेरे कारण आपको बडी बडी मुसीबतो और मुश्किलो से सघर्ष करना पड़ा, इसीलिए हार्दिक दु ख है। आज से प्रकाश आपका और आशा इस घर की राजरानी है।

(दोनों सम्बन्धी परस्पर गले लगते हैं। दौलतराम के पुकारने पर प्रकाश उपस्थित होता है, और सकेत से प्रकाश कैलाशबाबू के चरणस्पर्श करता है)

कैलाश—(प्रकाश के शिर को सूँघते हैं और आनन्द विभोर अश्रुओ से मगल सूचक तिलक करते हुए आशीर्वाद देते हैं) बेटा ? तुम केवल अपने घर के ही प्रकाश नहीं—मेरे घर के प्रकाश नहीं, जाति,

समाज, और देश के प्रकाश नहीं अपितु मानव जगत् के प्रकाशस्तम्भ हो। आज तुम्हारे प्रकाश से अनेक व्यथित हृदयों का कष्ट तिमिर दूर होगा। अनेको का भग्न हृदय पवित्र स्नेह ज्योति से जगमगाने लगेगा।

अनेक भावी कन्याओं की मनोकामना कुसुम कलिकावलि तुम्हारे अरुणाभ प्रकाश से प्रस्फुटित होगी।

अनेक वात्सल्यस्वरूप, ममतारूप माताओ की उदात्त भाव वल्लरियाँ तुम्हारे प्रकाशरश्मि से विकसित होंगी।

विविध चिन्ताओं से विदलित पिताकी आनन्द-लता पुष्पित होगी। समस्त कुलीनो के हृदय में ऐक्य की अमरवेलि फलित होगी। मेरे जीवन वल्लरी सुमन सुवन ?

तुम युग युगान्तर तक सबके हृदयाकाश के प्रकाश रहो। आज की घडी धन्य है। मुझे आज खोया प्रभात मिल गया है। आज मेरे मानस क्षितिज पर चिन्तासागर निस्तरग है।

आज मैं जीवन के स्वर्णिम प्रभात में शीतल मन्द सुगन्ध आनन्द पवन पीयूष प्राप्त कर समस्त सुखों की कामनाओं का भाजन बन रहा हूँ। (कैलाशबाबू प्रकाश के तिलक करते हैं। प्रकाश तथा दौलतराम हार्दिक स्वागत के साथ जाते हुए कैलाशबाबू का प्रधान द्वार तक सन्मान करते हैं)

(पटाक्षेप)

पंचम दृश्य

स्थान—कैलाशबाबू का सजा मकान

समय—गोधूलि

(आज कैलाशबाबू के घर बारात आने वाली है, जिसके स्वागत के लिए मकान के सम्मुख बड़ा सुन्दर आकर्षक स्वागत-सभा मंडप सजाया गया है। उसमें आदर्श पुरुषों और महिलाओं के चित्र लटक रहे हैं, जो पवित्र और कर्त्तव्योन्मुख भावनाओं की जागृति करते हैं। मंडप के चारों तरफ सुमनो से परिपूर्ण गमले रखे हैं बीच में कुर्सियाँ सुचारुरूपेण व्यवस्थित हैं। अब बारात के नगारे शहनाइया की ध्वनि स्पष्ट सुनाई पड़ने लगी है।

बारात के स्वागतार्थ आये हुए अनेक सुशिक्षित योग्य पुरु मंडप में आकर खड़े हैं। बारात आती दिखायी देती है। जिसमें अनेक विद्वान्, नगरसेठ एवं गण्यमान्य नागरिक हैं। आगे बढ़कर कैलाशबाबू बड़े उल्लास से उनका तथा दौलतराम का हार्दिक अभिनन्दन करते हैं।)

कैलाश—(नम्रता से) आज आप लोगों का जो भी स्वागत करें थोड़ा है। पलकों पर बिठाने पर भी सन्तोष नहीं होता। आनन्द भावनाओं के झूले पर झुलाने पर भी तृप्ति नहीं होती।

दौलत—कैलाशबाबू! हम लोगों में कोई भेद भाव नहीं है। आपने बारातियों के स्वागत, सत्कार, और निवास का बड़ा ही मनोमुग्धकारी प्रबन्ध किया है। ऐसा मालुम पड़ता है। सजावट का भार

विश्वकर्मा को दिया गया है। हम बरातियो का स्वागत देखकर दंग हैं। परम प्रसन्न हैं। अन्त करण से मुग्ध है।

कैलाश—शास्त्र सम्मत वरवधू के लग्न कार्य की सुव्यवस्था प्राङ्गण मे की गयी है। इस सभामडप मे एक प्रीति सम्मेलन का आयोजन किया गया है। धुरन्धर विद्वान् पधारे हैं। जिनके अमूल्य उपदेशो से हम लोग दिव्य प्रकाश प्राप्त कर सकेंगे।

दौलत—बड़े हर्ष का विषय है, आज हम सोना और सुगन्ध का एक जगह अनुभव कर रहे हैं। आज आपने हम लोगो को कैलाशपुरी मे ही ला बिठाया है। आप लग्न के कार्य का सचालन करें, सभा की समस्त कार्यवाही का भार मुझे सुपुर्द करदें।

(दौलतराम सभामच की ओर पधारते हैं। और कैलाश प्राङ्गण की ओर प्रस्थान करते हैं)

दौलत—(मच के पास खड़े होकर) प्यारे बन्धुओ। आज की शुभ घड़ी में यहा इसी मडप मे एक प्रीति सम्मेलन होने जारहा है। जिसको आप लोग बड़े प्रेम और शान्ति के साथ पूर्ण सफल बनाने में सहयोग देंगे।

(समस्त बराती शान्ति के साथ अपने अपने स्थान पर बैठ जाते है। कैलाशबाबू की तरफ से प्रेमचन्द सयोजक की कार्यवाही करने आते हैं। उनके हाथ में कुछ कागजात हैं। मंच के निकट आकर ये कार्यवाही प्रारभ करते हैं।)

प्रेमचन्द—आदरणीय गुरुजनो एव सुहृद् महानुभावो।

आज यहाँ जो प्रीति सम्मेलन होने जारहा है, उसकी समस्त कार्यवाही सचालनार्थ सभाध्यक्ष की परमावश्यकता है। मैं विनम्र

प्राथना करता हूँ कि पूज्य श्री सूर्यकान्त जी वेदान्ताचार्य, साहित्या चार्य इस पद को सभालने का कष्ट कर हमे अनुगृहीत करें।

(प्रेमचन्द के स्वस्थान ग्रहण करने के उपरान्त दौलतराम समर्थनार्थ खडे होते हैं)

दौलत—मैं इस प्रस्ताव का समर्थन करता हूँ।

(श्री सूर्यकान्त जी आभार प्रदर्शित करते हुए करतल ध्वनि के बीच अध्यक्षपद पर आसीन होते हैं, दौलतराम उनके गले मे सुन्दर सुगधित सुमनों का हार पहिनाते हैं। जिसका सारे सज्जन तालियों की गड़गडाहट मे स्वागत करते हैं।)

सयोजक—अब कार्यवाही आरभ होती है। आप सारी बातो का ध्यान से श्रवण मनन करें। अब आपकी सेवा मे श्री नरोत्तम जी शास्त्री "सगीतरत्न" वाद्ययन्त्रों के साथ सगायन मगलाचरण करेंगे।

(वीणापाणि नरोत्तम जी सभापति के समीप आकर बैठते है। और सुरीले सुमधुर स्वरो म गजानन विघ्नेश्वर भगवान् का स्तवन करते हैं)

मगलाचरण

नरोत्तम—

जेतुं यस्त्रिपुर हरेण हरिणा,
व्याजाद्बलिं बध्नता।
स्रष्टुं वारिभवोद्भवेन भुवन,
शेषेण धर्त्तुं धराम्।
पार्वत्या महिषासुर—प्रमथने,
सिद्धाधिपं सिद्धये।
ध्यात· पचशरेण विश्वजितये,
पायात्स नागानन·॥

❀ भजन ❀

जय गणेश गणनाथ दयानिधि,
सकल विघन कर दूर हमारे।
लम्बोदर गजवदन मनोहर,
कर तिरशूल परशुधर धारे।
ऋद्धि सिद्धि दोय चँवर डुलावे,
मूस के वाहन परम सुखारे ॥ जय ॥
ब्रह्मादिक तेरो ध्यान धरत है,
सुरनर मुनि सब दास तुम्हारे।
सदा सहाय करो सन्तन की,
भक्त जनो के तुम रखवारे ॥ जय ॥

(नरोत्तम जी के बैठने पर संयोजक महोदय के कहने पर गजानन जी मंच पर कविता पाठ करने के लिये उपस्थित होते है।

गजानन—मान्यवर सभापति जी एवं उपस्थित सज्जन वृन्द।
मेरी कविता का शीर्षक "उद्बोधन" है।
हिन्दू समाज! तू जाग जाग।
आगया समय अब शीघ्र जाग॥

(१)

सुख छोड़ अरे। तजदे विहार।
स्वारथ का ना ले तूँ अधार॥
प्रस्थान गती के साथ साथ।
टूटे दिल की है यह पुकार॥

जग जाये सोया अब समाज,
सुन कन्या दुखद विहाग राग ॥
हे कर्णधार! तूँ जाग जाग।
आगया समय अब शीघ्र जाग ॥

(२)

वह पूर्व सनातन शान रहे,
श्री पृथ्विराज की आन रहे।
घर घर में कन्या ना भटके,
यह दुःख हृदय में ना खटके
अपने स्वरूप का करो ख्याल,
सीखो जीवन में तनिक त्याग।
रे युवक! जगत् तूँ जाग जाग।
आगया समय अब शीघ्र जाग ॥

(३)

व्रतवरण प्रेम से धारा है,
फिर दो दहेज क्या नारा है?
कहता डंके की चोट मार,
लूँगा यह धर्म हमारा है।
चिनगारी लगी सभी दिल में,
जन जन में धधकी प्रलय आग ॥
रे धर्मवीर! तूँ जाग जाग।
आगया समय अब शीघ्र जाग ॥

(४)

गौरव कन्या का बना रहे,
तेरा मस्तक भी तना रहे।
दम्पति सुख को पावें महान्,
सब प्रेम पूर्ण हो करे गान।
कस कमर करो अब यह प्रचार,
लेवें ना घृणित दहेज भार।
कन्याओ की है यही माँग।
हे धीर वीर ! तूँ जाग जाग॥

(तालियों की गडगडाहट में गजानन जी स्वस्थान ग्रहण करते हैं, और सयोजक महोदय के कहने पर उमाकान्त जी आज के लिए पूर्व निर्धारित विषय "विवाह में दहेज" पर दो शब्द कहने को मंच पर उपस्थित होते हैं।)

उमाकान्त—पूज्य सभाध्यक्ष महोदय ! एव समुपस्थित सज्जनों !

परम पूज्य पिता परमेश्वर ने मनुष्य को स्वतन्त्रता प्रदान की है; परन्तु इसका भी उपयोग वहीं तक किया जासकता है, जो दूसरों की स्वतन्त्रता में बाधक न हो। इस स्वतन्त्रता के सदुपयोग रूपी अमूल्य निधि को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए सुखाभिलाषी मानव जीवन क्षेत्र में नियम और मर्यादा के परकोटों का निर्माण करता है। विवाह सँस्कार भी उन आवश्यक परकोटों में से एक दृढ परकोटा है। जिसमें दो प्राणी भावुकता, श्रद्धा, भक्ति, विश्वास, कल्पना के पंचद्रव्यों से अनन्त भवन का निर्माण करते है।

विवाह सुख सम्पन्न जीवन का एक भावपूर्ण मगलगान है,

जग जाये सोया अब समाज,
सुन कन्या दुखद विहाग राग ॥
हे कर्णधार ! तूँ जाग जाग ।
आगया समय अब शीघ्र जाग ॥

(२)

यह पूर्व सनातन शान रहे,
श्री पृथ्विराज की आन रहे ।
घर घर मे कन्या ना भटके,
यह दुख हृदय मे ना खटके
अपने स्वरूप का करो ख्याल,
सीखो जीवन मे तनिक त्याग ।
रे युवक ! जगत् तूँ जाग जाग ।
आगया समय अब शीघ्र जाग ॥

(३)

व्रतचरण प्रेम से धारा है,
फिर दो दहेज क्या नारा है ?
कहता डडे की चोट मार,
लूँगा यह धर्म हमारा है ।
चिनगारी लगी सभी दिल मे,
जन जन मे धधकी प्रलय आग ॥
रे धर्मवीर ! तूँ जाग जाग ।
आगया समय अब शीघ्र जाग ॥

(४)

गौरव कन्या का बना रहे,
तेरा मस्तक भी तना रहे।
दम्पति सुख को पावें महान्,
सब प्रेम पूर्ण हो करे गान।
कस कमर करो अब यह प्रचार,
लेवें ना घृणित दहेज भार।
कन्याओं की है यही माँग।
हे धीर वीर ! तूँ जाग जाग॥

(तालियों की गडगडाहट में गजानन जी स्वस्थान ग्रहण करते हैं, और संयोजक महोदय के कहने पर उमाकान्त जी आज के लिए पूर्व निर्धारित विषय "विवाह में दहेज" पर दो शब्द कहने को मंच पर उपस्थित होते हैं।)

उमाकान्त—पूज्य सभाध्यक्ष महोदय ! एवं समुपस्थित सज्जनों !

परम पूज्य पिता परमेश्वर ने मनुष्य को स्वतन्त्रता प्रदान की है, परन्तु इसका भी उपयोग वहीं तक किया जासकता है, जो दूसरों की स्वतन्त्रता में बाधक न हो। इस स्वतन्त्रता के सदुपयोग रूपी अमूल्य निधि को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए सुखाभिलाषी मानव जीवन क्षेत्र में नियम और मर्यादा के परकोटों का निर्माण करता है। विवाह संस्कार भी उन आवश्यक परकोटों में से एक दृढ़ परकोटा है। जिसमें दो प्राणी भावुकता, श्रद्धा, भक्ति, विश्वास, कल्पना के पंचद्रव्यों से अनन्त भवन का निर्माण करते हैं।

विवाह सुख सम्पन्न जीवन का एक भावपूर्ण मंगलगान है,

जिसकी मधुर मनोहर आकर्षक स्वरलहरी मादकता में नरनारी सदैव छके और भीगे रहते है।

विवाह जीवन कल्पवृक्ष की विशाल शाखा है। जिस पर अनेक मनोरथरूपी अमर फलो की उपलब्धि होती है, किन्तु महादुःख है कि आज हम स्वार्थ की तीक्ष्णधार युक्त दहेज रूपी कुठार से इस कल्पतरु को छिन्न भिन्न करके सुख की कपोल कल्पना करना चाहते हैं। जो बिन्दु में सिन्धु, जल में अनल और कण मे मण के समाने के सदृश है।

प्राचीन युग मे विवाह मे दहेज प्रथा का गौण स्थान था, किन्तु आज दहेज की प्रधानता--स्वार्थ परायणता ने विचारशील महानुभावो के हृदय में भी बडा परिवर्तन कर दिया है। सज्जनवृन्द त्याग के महत्त्व को विस्मृत कर बैठे हैं। पुरुषार्थी वीरो को अपने पुरुषार्थ का गर्व नहीं रहा। जिसके परिणाम स्वरूप चतुर्दिक् में हाहाकार और अशान्ति की कोलाहल ध्वनि सुनाई देती है।

जिस प्रकार समझदारी आने से पहिले ही मादक यौवन विलीन होजाता है--मालाकार की सूची से विद्ध होने से पूर्व ही सुन्दर सुगन्धित सुमन कुम्हला जाते हैं--स्वागताभिनन्दन के लिए धूमधाम से सुसज्जित सुन्दर बाग उपभोग करने के पूर्व ही श्रीहत सिहर उठता है, वैसे ही दहेज दावानल के कारण कन्याओ का अलिकुल कलकल कलित कानन विकसित होने से पूर्व ही दग्ध होजाता है। इसीके कारण कुलीनो को कुलीनता से, गुणिजनो को गुणगरिमा से पुरुषार्थियों को पुरुषार्थजन्य फल से सदैव वंचित रहना पडता है।

आज समाज के चतुर, सुयोग्य, सज्जन-कुल-मुकुटमणियों की आँखें भी इस दहेज की आँधी ने बन्द करदी हैं। कुछ काल पूर्व जो लोग विवाह में दहेज आदि के ठहराव की कुरीतियों को अनुचित कहते थे, वे ही आज स्वार्थ, लोभ के चरण चेरे बनकर दहेज लेकर छाती फुला-फुलाकर इतस्तत: निर्लज्ज साभिमान फिरते नजर आते हैं।

आज समाज के अधिक धनी अमीर जन भी दहेज के नाम पर दरिद्रनारायण के आचरणों का अनुकरण कर रहे हैं। आज, समाजरूपी सरसब्ज बाग के सुगन्धित फूलों से हृदयाकर्षक मधुर गन्ध की जगह हृदयोद्वेजक स्वार्थ की विषम दुर्गन्ध निकल रही है। जो धनिकवर्ग शीतलराशि के समान समाज की शोभा थे वे ही आज दहेज लेकर लोभ की उल्काओं से उसे आतंकित कर रहे हैं। दहेज की प्रचुरता सर्वसाधारण में अभाव के भावों की सर्जना कर रही है, जिससे गरीब जनता निराशा के आँसू पी पीकर जी रही है। ऐसी विषम परिस्थिति से समाज की रक्षा करना प्रत्येक मानव का धर्म है, कर्म है, कर्त्तव्य है।

यदि आप समाज में सुन्दर, सुखद, व्यवस्था का निर्माण करना चाहें, युवकों को उन्नतिपथ पर अग्रसर होते देखना चाहें, समाज की सुन्दर, सुशील, गुणवती, सुकन्याओं को विकसित करना चाहें, तो आज ही प्रतिज्ञा करें, कि सत्यानाशी स्वार्थपूर्ण दहेज का कहीं भी समर्थन न करेंगे। इस दहेज के बनावटी, दिखावटी रूप का सर्वत्र विरोध करेंगे। इसी में समाज का कल्याण है।

"जयहिन्द"

(श्री उमाकान्त शर्मा अपना व्याख्यान समाप्त कर स्वस्थान ग्रहण करते हैं, और संयोजक महोदय की आज्ञा से श्रीगंगाधर दहेज पर स्वनिर्मित एक कविता पढ़ते हैं ।)

गंगाधर—श्रद्धास्पद सभापति जी ! एवं परमप्रियमित्रों ! मेरी कविता का शीर्षक "अबला की करुण कहानी है" है ।

अबला की करुण कहानी है ।

(१)

शैशव में थीं अनवद्य प्रभा,
　　परिजन सब प्रेम दिखाते थे ।
पढ़ने में थीं आतुर चातुर,
　　शुचि शारद कह बतलाते थे ।
यौवन अम्बर जब ओढ़ लियो,
　　फिर निरख निरख भय खाते हैं।
दुख दहेज की देवी कह,
　　शूलो के कुसुम चढ़ाते है ।

(२)

मैं सोच रही व्याकुल होकर,
　　ना, जीवन का कुछ मूल्य रहा ।
जँह बरस रहे थे, अमृतकण,
　　अब गिरते गिर पर उपल वहाँ ।

यौवन वसन्त पतझड दीखे,
कैसा यह नव-परिवर्तन है।
विदलित, कपित अरमान सभी,
नव जीवन का सम्मर्दन है।

(३)

श्री शैलसुता सी अचल-हृदय,
सेवा की बहती सरिता है।
जिससे गठबन्धन जीवन का,
उस काव्यपुरुष की कविता है।
कैसी यह हीन-मलीन-दशा,
पशुवत् हा! बेची जाती हैं।
यदि ग्राहक ने मुख मोड़ लिया,
पड पिंजरे में विलखाती है।

(४)

कभी लटक रही, फाँसी पर हैं,
कभी जीती ही जल जाती हैं।
कभी डूब रही गहरे जल में,
कभी विष खाकर सुख पाती हैं।
दुर्धर दहेज दानव द्वारा,
होती निर्मम कुरबानी है।
युवको! कुछ सोच विचार करो,
अबला की करुण-कहानी है

(तालियों की गड़गड़ाहट मे गगाधर वैठते हैं, और सयोजक महोदय द्वारा नाम पढने पर वाल गगाधर अपनी कविता सुनाने के लिए खडे होते हैं)

वालगगाधर—सम्माननीय सभापति महोदय एव समुपस्थित सुहृदय वृन्द !

(१)

ऐ मानव ! मत कर मनमानी,
मानवता मोह-निशा मे है।
सुख शान्ति सरोज विकास नहीं,
दानवता सर्व दिशा मे है।
वहती जलधार विलोचन मे,
माँ का अँचल भी सिंचित है।
हा ! पिता सिसक कर रोता है,
रस सौख्यसुधा से वचित है।

(२)

तू धीर वीर गभीर जगत मे,
पुरुषसिंह कहलाते हो।
कन्या के पाणिग्रहण पूर्व,
फिर भी दहेज ठहराते हो।
शक्ती अमोघ जब तुम में है,
निर्धन से क्यो कतराते हो,
कन्या जो घर की लक्ष्मी है,
उसका भी मोल लगाते हो।

(३)

रे ! देख समाज की हीन दशा,
इक दिन तू भी घबरावेगा।
जलती दहेज की ज्वाला में,
तूँ भी निर्मम जल जावेगा।
शत स्वार्थ सुनहला स्वप्न तेरा,
चिर काल न रहने पावेगा।
अपनी भगिनी या बेटी का,
जिस दिन तूँ ब्याह रचावेगा।

(४)

हम सुख समाज की डाली है,
बस तूँ इसका रखवारा है।
हम स्नेह-फलों से झुकी हुई,
बस तूँ ही एक सहारा है।
तव प्रेम का नेम निराला है,
तेरा दिल इतना काला है।
तूँ धनमद में बेसुध होकर,
पागल कितना मतवाला है।

(५)

भयभीत हुई सारी तनया,
चिर, स्नेह का धागा तोड़ दिया।

दिल दर्पण भोली कन्या का,
लालच पत्थर से फोड़ दिया।
हम कहाँ! पुकार करें, किससे,
जग मे फिर कौन सहारा है।
करदो दहेज को शीघ्र बन्द,
यह अनुनय नमन हमारा है।

(बालगगाधर कविता पाठ करने के पश्चात् अपनी जगह पर बैठते हैं, और सयोजक की आज्ञा पाकर श्री चन्द्रशेखर "दहेज" शीर्षक कविता पाठ करने मंच पर उपस्थित होते हैं)

चन्द्रशेखर—सभाध्यक्ष महोदय एव समागत सज्जन वृन्द! यह कविता दहेज के दुष्परिणाम को लक्षित करके लिखी गयी है।

(१)

नाश! नाश! हा महानाश!
विध्वस एक गूँजता गगन मे।
अम्बर-तल अवनी पर आता,
आग लगी, प्रत्येक सदन में।
प्रलयकारी दृश्य सामने,
आँखें जिनको देख न पातीं।
कन्याओं की हीन दशा है,
जगह जगह वे ठोकर खातीं॥

(२)

जन-जन-मन में नया जागरण,
कैसे स्वार्थ सिद्ध अब होगा।
गाढ़ी मेहनत का धन संचित,
पानी जैसा नहीं बहेगा।
कन्याओं के मोल तोल पर,
महल मनोहर खड़े न होंगे।
मनमानी अब नहीं चलेगी,
उत्पीडन, शोषण ना होंगे।

(३)

अत्याचारों की कुयन्त्रणा,
मानव होकर कौन सहेगा।
अपनी तनया की बलि देकर,
कौन बाप चुपचाप रहेगा।
सहने की सीमा होती है,
स्वार्थी लोगों का जमघट है।
कन्याएँ समाज की आशा,
उनकी निर्मम चिल्लाहट है।

(४)

मानवता का दम भरते फिर,
कितने दिवस और बीतेंगे।

सजग देश है स्वार्थी सज्जन,
सत्पथ चलना कब सीखेंगे।
जागो ! जागो ! युवको जागो !
सभल, सभल कर पग धरना है।
तज दहेज अनुराग राग से,
कन्यावरण मधुर करना है।

[चन्द्रशेखर कविता पाठ करने के पश्चात् करतलध्वनि में स्वस्थान ग्रहण करते हैं, और सयोजक महोदय के निर्देश करने पर "व्याख्यान वाचस्पति" श्री भारतभूषण "दहेज" पर दो शब्द कहने को मंच पर उपस्थित होते हैं]

भारतभूषण—परममान्य सभाध्यक्ष महोदय एवं समागत सज्जनो ?

इस असार परिवर्तनशील ससार मे स्वार्थ के समान कोई कडी वस्तु नहीं है। सहस्रो कृपाणो, लाखो बन्दूको, अगणित उद्जन बमों से भी इसको झुकाना, नरम करना, टेढ़ा करना, टेढ़ी खीर है। लेकिन ऐसे कठोर वज्रस्वरूप स्वार्थ को भी प्रेम रूपी मन्त्र से पानी पानी किया जा सकता है। जिस प्रेम मन्त्र का प्रणव अक्षर विवाह सँस्कार है।

यह अत्यन्त दुर्भाग्य का विषय है, कि ऐसे अमोघ प्रणयरूप विवाह सँस्कार को दूषित दहेज आदि कुरीतियो के दुर्व्यसनो से निर्जीव बनाया जारहा है। भव-भूतियो के भडार भारत मे यह दहेज प्रथा कुत्सित कलंक है। कीर्तिइच्छुक, स्वार्थी सज्जन लोभी इसे अपनाने में अपना गौरव और धर्म समझते हैं, किन्तु धर्म की आड में यह उनका केवलमात्र स्वार्थ साधन ही है।

समाज के बड़े बडे प्रख्यात रईस जब अपनी तनया के विवाह में पच्चीस पच्चीस हजार का चेक भेजने में अपना गौरव और इज्जत समझते हैं ; तब शिक्षाप्रेमी समाजहितैषी सज्जनों का मस्तक चार आदमियों के मध्य शर्म के मारे अवनत होने लगता है। विवाह मे किसी प्रकार भी दहेज का दिखलावा करना इस लोभ विषधर भुजंग को पय पान कराकर उसे और भी भयकर बनाना है, जिसके दर्शनमात्र से सर्व साधारण थर थर काँपने लगते हैं। ऐसी कुरीतियों का किसी प्रकार भी समर्थन करना समाज के सरल पथिको के पथ में काँटे बिछाना है। मानवजीवन के लहलहाते सरस मादक वसन्त में पतझड़ का प्रसार करना है। निर्धन जनता के हृदय पाटल पटल पर पावक, पत्थर और शोणित का वर्षण करना है।

जिस प्रकार शैलनिवासिनी सरिता पातालतोड़ कालवत् भयंकर गर्तों को भी ढाँक कर चलती है, इसी प्रकार समाज के कुछ लोग भी अपनी चातुरी से इन कुरीतियों की वक्र-रेखाओं को धर्म सलिल की आड में छिपाकर चलने का प्रयत्न करते हैं, जिसके दुष्प्रभाव को समाज अब सहन करने को पूर्णत असमर्थ है।

इस प्रकार के घृणित कार्य ही आज समाज में प्रसृत अव्यवस्था, अनैतिकता और अमर्यादा के प्रमुख कारण है। लोभ स्वार्थ के अन्धकार में सारे सज्जन समाज के गुणरूपी वृक्ष, पौधे, लताएँ अन्तर्हित होरहे हैं।

किसी प्रकार चोर को पकड़ना सहज होसकता है, किन्तु सब के हृदय भवन में छिपे स्वार्थ चोर को पकड़ना दुर्लभ हो रहा है। यह चोर भीतर ही भीतर बैठा सारे लोगो की इज्जत, मान, मर्यादा,

तथा कन्याओं का शील गुण, जीवन तक का अपहरण कर रहा है। ऐसे भयकर तस्कर को निकालने का सब को पूर्ण प्रयत्न करना चाहिये।

जो युवतियाँ पुरुषो के चरण-स्पर्श मे अपना जीवन सार्थक समझती है, सेवा करने मे अपना कर्त्तव्य पालन समझती हैं, दुखो में अपना समस्त सुख समर्पण करने में गौरव समझती है, उन्हें आज दहेज के कारण घृणा, अपमान, तिरस्कार की दृष्टि से देखना क्या कभी मानवता का व्यवहार कहा जासकता है ?

आज घर में कन्याओं के गुरुगौरव को भग कर देना कोमल तन्तुओ से भी सरल और सहज समझा जारहा है।

आज ससार को सत्य और मिथ्या मानने वाले भी धर्म और कर्त्तव्य को सच्चा मानते हुए महिला समाज का जो अपमान निरादर, तिरस्कार कर रहे हैं, वह सभ्य समाज के लिए परम लज्जा का विषय है।

आज अनेक गुणवती शीलवती कन्याएँ इस दहेज की कलक कालिमा से मुक्त होने के लिए विषपान करती हैं, सरिता मे समाती हैं, फाँसी पर लटकती हैं, और जीते जी अग्नि शिखा मे झुलस झुलस कर जलती हैं। फिर भी सच्चे समाज सुधारक स्तब्ध हैं। नेतागण भी चुप हैं। पचपरमेश्वर भी मौन हैं, जब तक यह कुम्भकर्णी निद्रा नहीं टूटेगी, समाज का सुधार, उत्थान और सवर्द्धन नितान्त असम्भव है।

इस दहेज के बन्द होने पर सर्वसाधारण का एक साथ मधुर मिलन होगा, समाज अभिनयशाला में सदा कर्त्तव्य-शील सद्विवेक का उत्तम दृश्य देखने को मिलेगा।

आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है, कि आप लोग मेरे दहेज बन्द

के प्रस्ताव का करतलध्वनि के साथ हार्दिक समर्थन करेंगे।

'जयहिन्दी"

(तालियों की गडगडाहट मे भारतभूषण स्वस्थान ग्रहण करते हैं, और सयोजक महोदय के कहने पर कवयित्री राजकुमारी अपनी कविता सुनाने मच पर उपस्थित होती हैं)

राजकुमारी—माननीय सभापति महोदय तथा उपस्थित सुहृदय उन्नतिशील सज्जनो।

मेरी कविता का शीर्षक है —

रे नर! दहेज ठहराता क्यों?

(१)

कोमल कोमल कन्याओं के,
भावकुसुम की अधकलियों को।
मसल मसल कर फेंक रहा क्यों,
खिलने दे उन रग रलियों को।
मानव बाग सजा है उस पर,
घन शोले बरसाता क्यो?
रे नर! दहेज ठहराता क्यों?

(२)

जीवन वीना तोड़ फोडकर,
स्वर लहरी मे आग लगाकर।
मधु का प्याला चूर्ण-चूर्ण कर,
वैतरणी मे उसे बहाकर।

दो दहेज माँगा फिरता है,
भिक्षा पाठ पढ़ाता क्यो ?
रे नर ! दहेज ठहराता क्यो ?

(३)

कन्याओ के आर्त्तनाद से,
स्वर्ग-लोक अरु अम्बर सारे।
टूट पडेंगे अब अवनी पर,
सूर्य चाँद आकाश सितारे।
घृणित वासना से उद्वेलित,
मोहक नाद सुनाता क्यो ?
रे नर ! दहेज ठहराता क्यो ?

(४)

चला गया सामन्त काल,
मिट गया स्वार्थ, नवयुग आया।
जगे सभी हैं कर्मवीर,
निर्बल पर करते है छाया।
चोटी पर चढ़ रही सभ्यता,
नीचे उसे गिराता क्यों।
रे नर ! दहेज ठहराता क्यो ?

(५)

अन्धरूढ़ियो का जमघट है
उसे मिटाना मानवता है।

स्वार्थ लोभ में फूले फिरना,
नहीं वीरता कायरता है।
यह आदर्श भ्रष्ट है जग का,
माँ का दूध लजाता क्यों ?
रे नर ! दहेज ठहराता क्यों ?

[कविता पाठ के बाद जोर जोर की करतलध्वनि में "पुन. पाठ पुन पाठ" की आवाज होती है। कवयित्री दुबारा कविता पाठ करने के पश्चात् स्वस्थान ग्रहण करती हैं, और सयोजक महोदय के सकेत से वसन्तीलाल गुप्ता अपनी कविता सुनाने के लिए मच पर उपस्थित होते हैं]

वसन्ती लाल—मान्यवर सभापति महोदय एव उपस्थित सज्जन समाज !

मेरी कविता की शीर्षपङ्क्ति है ।
"नारी आदर्श कहाँ, है ?
मङ्गल माधुर्य कहाँ" है ?

(१)

पग पग पर कुचली जातीं,
मनहर सेवा की कलियाँ।
घर घर में सदा बिखरती,
अनमोल अश्रु की लड़ियाँ।
कब हो समाप्त यह दुख की,
मानव जीवन की घड़ियाँ।
जकड़ी कुरीति से रोतीं,

टूटेंगी कब ये कड़ियां।
यह विकट विवाद जहाँ है,
नारी आदर्श कहा है ? मंगल माधुर्य कहाँ है ?

(२)

सुमनों सी जो थीं हँसती,
अधरों पर खुशी कहाँ है।
पुलिनों की मधुर सरसता,
मादकता धरा कहा है।
वह पंचम पिक का गायन,
मादक मञ्जरी कहा है।
दयनीय दशा है पग पग,
फिर अन्तर्मिलन कहा है।
देवी का रूप कहा है ?
नारी आदर्श कहा है ! मङ्गल माधुर्य कहाँ है ?

(३)

वे मग मग ठोकर खातीं,
आंखें झर झर भर आती।
वे मोल को दर दर जातीं
फिर भी हैं ठौर न पाती।
मानव जीवन की झाँकी,
वे देख देख सरमाती।
लज्जा से शिर न उठातीं,
वे मन ही मन खिसयाती।

पुरुषो ! पुरुषत्व कहाँ है !

नारी आदर्श कहाँ है ! मङ्गल माधुर्य कहाँ है ?

(४)

प्राची मे मनोहर किरणों,

का नर्तन अब कब होगा।

ये सूखी हैं लतिकाएँ,

सरसावन फिर कब होगा।

रसराज कमल कलियों पर,

गुञ्जार मधुर कब होगा।

पीछे कुरीति रजनी के,

जागृत प्रभात कब होगा।

जब मोल दहेज न होगा।

नारी आदर्श वहाँ है। मंगल माधुर्य वहाँ है!

(करतल ध्वनि में कवि अपना स्थान ग्रहण करता है, और संयोजक के निर्देश को पाकर कवि सन्तोष अपनी कविता पढ़ने उठते हैं)

सन्तोष—परम श्रद्धेय सभापति जी ! एवं अन्य श्रोतागण !

मेरी कविता मे यह दिखलाया गया है, कि पवित्र वैवाहिक व्रत धारण करने वाले दो प्रेमियो को दहेज किस प्रकार दग्ध करता है, जिसका करुणापूर्ण दृश्य मेरी कविता में देखिये —

(१)

थी लगी भुभीड़, बरातिन की,

गुलजार भवन भी होता था।

स्वागत की थी चहल पहल,
अतिप्रेम प्रदर्शन होता था।
जिस जगह बना था शुभ मंडप,
मलयज समीर मन भाया था।
सुख की छाया की छाया में,
आनन्द अनोखा छाया था।
उन हँसती आँखों को क्षण मे अंगार उगलते भी देखा।
कन्या के मानसरोवर पर फिर कौओ को उड़ते देखा॥

(२)

चाँदनी बनी घर की कन्या,
मुसकाती तारो के सग मे।
कैरव प्रसन्न पय का निर्झर,
झरता था झर झर आँगन मे।
जीवन पयोधि लहराता था,
कामना लहर मदमाती थी।
शीतल सुगध मधु गध अंध,
मलयानिल छटा सुहाती थी।
स्वारथ दहेज की आँधी में पल में सबको छिपते देखा।
वर्षा में फिर तो जार जार, उस प्रागण को रोते देखा॥

(३)

डाली पर तनया खिली कली,
मादक सौरभ मतवाली थी।

उपवन द्रुम झूम रहे मद से,
कोयल की तान निराली थी।
हरियाली छिटक रही चहुँदिश,
भ्रमरो का गान सुहाता था।
वनमाली कभी जो आ निकला,
सुखसे बेसुध हो जाता था।
लोभी वर कर मे आरा था, फिर डाली को कटते देखा।
सूनी डाली, सूना उपवन, वनमाली को रोते देखा॥

४

सब बीत गई सुख की घड़ियाँ,
रवि के सम्मुख था, अँधियारा।
पाखण्ड कर रहा अट्टहास,
सद्गुण फिरता मारा मारा।
भारत के कोने कोने में
आतंक चतुर्दिश है छाया।
मानवता की सुख गोदी से,
मानव दानव बन चिल्लाया।
पश्चिम सागर में कीर्तिसूर्य को, व्यस्त अस्त होते देखा।
रवि की दयनीय समाधी पर, शशि को फिर इठलाते देखा।

५

कन्या की आँखें भीगी थीं,
वर अवनत मस्तक चलता था।

यह प्रेम नहीं रुचकता है,
नीरस जीवन से डरता था।
अधम अधम यह महा अधम,
मैं ना दहेज ठहराऊँगा।
किस मुँह से माँगू क्षमादान,
निशि में कैसे बतलाऊँगा।

वरने गलती स्वीकार किया, फिर नूतन परिवर्तन देखा।
निर्माणध्वंस के साथ साथ फिर दम्पति सम्वर्धन देखा।

(तालियों की गडगडाहट में कवि सन्तोष बैठते हैं, और संयोजक महोदय की प्रार्थना पर सभाध्यक्ष महोदय अपनी विचाराभिव्यक्ति करते हैं)

सभाध्यक्ष—आदरणीय महिलाओ एवं सभागत महानुभावो !

यह संसार एक विचित्र विराट् अभिनयशाला है, जिसमें भोक्तापुरुष कर्त्री प्रकृति के साथ भिन्न भिन्न प्रकार का रंग-बिरंगा अभिनय किया करता है। उभय पात्रों में से किसी एक का भी अभाव अभिनय लीला को अपूर्ण एवं अरुचिकर बना देता है, यह सारा संसार युगलरूप का ही प्रतिफलन है। इसका अनुपम सच्चा स्पष्ट स्वरूप —

षोडश कलापूर्ण निशानाथ तथा नक्षत्र लोक की साम्राज्ञी रोहिणी की प्रणयकेलि में अंकुरित होते देखा।

अग जग मानस पटल में भूकम्प पैदा करने वाले कन्दर्प और करकुसुम कंकण की झनकार से मानव मनको मुग्ध करने वाली रति सुरति में विकसित होते देखा।

समस्त विश्व को अपने गम्भीर निनाद से प्रतिध्वनित करने वाले महासागर के साथ, हिमगिरि के धवल रमणीय सोपानो से मन्द-मन्द मुसकाती, अवतीर्ण होती, शस्यश्यामला, शाटिकाभिमंडित, कानन कमनीय कुसुमालकृत प्रियतम राग रंजित, कल कल निना-दिनी सुरसरिता के उत्साह प्रवाहों मे पल्लवित होते देखा।

अन्तस्तल में वेदना का मधुर भार लेकर अजस्र एक रस से घुल घुल कर जलने वाली दीपशिखा के संग, रूप माधुरी पर मुग्ध, सदाशयता से प्रेम विभार, एकात्मभाव के लिए विह्वल पतगों में पुष्पित होते देखा। तिमिर-त्तति के विषापसरण के लिए प्राथमिक सज्जा सम्पादनार्थ अरुण को प्रेषित कर स्वर्ण सज्जित दिव्य रथ पर आरूढ हो, रश्मि सुधा कलश को करमें ले प्राची में उदयगिरि मंच पर विहँसते भुवन—भास्कर के सम्मुख, सरोवरो के सरस पर्यंरत पर्यंकों पर अँगड़ाइयां लेती सरोजनी की अधर माधुरी में फलित होते देखा।

तभी तो कहा गया है:—

"The World is a pair"

मानव जगत् में भी सुन्दर शिक्षाप्रद, कल्याणप्रद, अभिनय के लिए स्त्री पुरुष प्रधान अंग माने गये हैं। इनके अभिनय का मंगलाचरण वैवाहिक सम्बन्ध के साथ ही साथ प्रारंभ होजाता है; जिसमें पुत्र, कन्या, भाई, बहिन, गुरु, शिष्य, आदि अनेक कला-कार अपने भिन्न भिन्न प्रकार के कलापूर्ण कुशल अभिनय के कौशल प्रदर्शन में किसी से पीछे नहीं रहना चाहते।

परन्तु बडे दु:ख का प्रसंग है कि यह पवित्र विवाह सँस्कार

स्वार्थ भूखंड पर सज्जनता रहित प्रेमभावविरत, अनेक कुरीतियों के साथ सम्पन्न किया जाता है, जिसमे दूषित दहेज का प्राधान्य रहता है।

आजकल की बरात को देखकर तो ऐसा मालूम पड़ता है, कि अज्ञानता के अश्व पर दम्भरूप दुलहा आरूढ है। लोभ, लालच, मोह और द्वेष पार्षद बनकर" मधुरी नौबत" बजा रहे हैं। तृष्णा कुमारी नर्तकी के रूप में निर्लज्जता पूर्ण नृत्य प्रदर्शन कर रही है। अभिमान, अहंकार, स्वार्थ, पाखड, सुन्दर वस्त्र एव आभूषणों में अपने को छिपाकर सजाकर बराती बने है। चिन्ता, भीति, पीड़ा, दहेज में कीमती सामग्री के स्थान पर प्रदान की जारही है।

भूलोक गौरव भारत मे मानवीय भद्रभावनाएँ धीरे धीरे लुप्त हो रही हैं। प्रेम, विश्वास, सत्य, न्याय, सहयोग, समत्व आदि जो मनुष्य की आत्मा का पुष्टिकर भोजन है, दुर्लभ होरहा है। पशुबल, घृणा, द्वेष, ईर्ष्या, लोभ, पाखड के मद भरे प्याले पी पीकर मानव मतवाले उन्मत्त होरहे हैं।

इन कुरीतियो के विपाक्त प्रभाव से मानव महासागर सारा का सारा खारा होरहा है। इसके खारे पानी से न किसी मनुष्य के मस्तिष्क रूपी भूखड का विकास होरहा है न किसी के हृदय रूपी खेतमें आदर्श भावनाओ के सुगन्धित सुन्दर सुमनो का बीजारोपण ही होरहा है, न कोई विपदा का मारा परिस्थिति का प्यासा, सहायता की एक घूँट भी पीकर अपनी तृषा शान्त कर पाता है।

आज समाज में चारो तरफ कन्याओ की अकाल मृत्यु की क्रन्दन-

समस्त विश्व को अपने गभीर निनाद से प्रतिध्वनित करने वाले महासागर के साथ हिमगिरि के धवल रमणीय सोपानो से मन्द-मन्द मुसकाती, अवतीर्ण होती, शस्यश्यामला, शाटिकाभिमण्डित, कानन कमनीय कुसुमालंकृत प्रियतम राग रंजित, कल कल निनादिनी सुरसरिता क उत्साह प्रवाहो मे पल्लवित होते देखा।

अन्तस्तल मे वेदना का मधुर भार लेकर अजस्र एक रस में घुल घुल कर जलने वाली दीपशिखा के सग, रूप माधुरी पर मुग्ध, सदाशयता से प्रेम विभोर, एकात्मभाव के लिए विह्वल पतगों में पुष्पित होते देखा। तिमिर-तति के विपापसरण के लिए प्राथमिक सज्जा सम्पादनार्थ अरुण को प्रेषित कर स्वर्ण सज्जित दिव्य रथ पर आरूढ हो, रश्मि सुधा कलश को करमें ले प्राची में उदयगिरि मंच पर विहँसते भुवन–भास्कर के सम्मुख, सरोवरों के सरस पर्यस्त पर्यङ्कों पर अँगड़ाइयाँ लेती सरोजनी की अधर माधुरी में फलित होते देखा।

तभी तो कहा गया है.—

"The World is a pair"

मानव जगत् में भी सुन्दर शिक्षाप्रद, कल्याणप्रद, अभिनय के लिए स्त्री पुरुष प्रधान अग माने गये है। इनके अभिनय का मगलाचरण वैवाहिक सम्बन्ध के साथ ही साथ प्रारंभ होजाता है; जिसमें पुत्र, कन्या, भाई, बहिन, गुरु, शिष्य, आदि अनेक कलाकार अपने भिन्न भिन्न प्रकार के कलापूर्ण कुशल अभिनय के कौशल प्रदर्शन में किसी से पीछे नहीं रहना चाहते।

परन्तु बडे दु.ख का प्रसग है, कि यह पवित्र विवाह सँस्कार

स्वार्थ भूखंड पर सज्जनता रहित प्रेमभावविरत, अनेक कुरीतियों के साथ सम्पन्न किया जाता है, जिसमें दूषित दहेज का प्राधान्य रहता है।

आजकल की बरात को देखकर तो ऐसा मालूम पड़ता है, कि अज्ञानता के अश्व पर दम्भरूप दुलहा आरूढ है। लोभ, लालच, मोह और द्वेष पार्षद बनकर "मधुरी नोबत" बजा रहे हैं। तृष्णा कुमारी नर्तकी के रूप में निर्लज्जता पूर्ण नृत्य प्रदर्शन कर रही है। अभिमान, अहंकार, स्वार्थ, पाखंड, सुन्दर वस्त्र एवं आभूषणों में अपने को छिपाकर सजाकर बराती बने हैं। चिन्ता, भीति, पीड़ा, दहेज में क़ीमती सामग्री के स्थान पर प्रदान की जारही है।

भूलोक गौरव भारत में मानवीय भद्रभावनाएँ धीरे धीरे लुप्त हो रही हैं। प्रेम, विश्वास, सत्य, न्याय, सहयोग, समत्व आदि जो मनुष्य की आत्मा का पुष्टिकर भोजन है, दुर्लभ होरहा है। पशुबल, घृणा, द्वेष, ईर्ष्या, लोभ, पाखंड के मद भरे प्याले पी पीकर मानव मतवाले उन्मत्त होरहे हैं।

इन कुरीतियों के विपाक्त प्रभाव से मानव महासागर सारा का सारा खारा होरहा है। इसके खारे पानी से न किसी मनुष्य के मस्तिष्क रूपी भूखण्ड का विकास होरहा है न किसी के हृदय रूपी खेतमें आदर्श भावनाओं के सुगन्धित सुन्दर सुमनों का बीजारोपण ही होरहा है, न कोई विपदा का मारा परिस्थिति का प्यासा, सहायता की एक घूँट भी पीकर अपनी तृषा शान्त कर पाता है।

आज समाज में चारों तरफ़ कन्याओं की अकाल मृत्यु की क्रन्दन-

ध्वनि, युवतियो की आत्महत्या की चीत्कार, अभिभावकों की निर्धनता की करुण पुकार सुन सुन कर कानों के परदे फट रहे हैं। आज मनुष्य के लिए उत्तुंग हिमगिरि, विशाल महासागर, और वनराज केशरी को अधीन कर लेना सहज है, किन्तु समाज की कुरीतियों का दमन करने मे आज वह असमर्थ होरहा है।

जिस प्रकार श्वान सूखी सड़ी निर्मांस हड्डी मे अपने रक्त को ही पान कर खुश होता है, उसी प्रकार अपने प्रियजन बन्धुओं से दहेज लेकर उनकी पुंजीभूत सुखराशि का पान कर अपने को कृतकृत्य समझना अज्ञान की पराकाष्ठा है।

जिस सूर्य मंडल से सारा जगत् प्रकाश प्राप्त करता है, वह भी रजनी के राज में अन्धकार में विलुप्त हो जाता है। जिस चन्द्रमंडल के प्रकाश में सारे तारागण चमकते हैं, वे भी दिन में अन्तर्हित होते देखे जाते हैं। सर्वव्यापी सदागति पवन भी स्थिर नहीं रहता।

महासागर की गगनचुम्बित लहरें भी कभी एक रूप में नहीं रहतीं। यह मनुष्य किसी से हठात् कोई चीज लेकर उसे स्थिर कायम करके सुख की अभिलाषा जो करता है, यह सिवाय बुद्धिमान्द्य के और क्या कहा जा सकता है?

दीपक तले अन्धेरे के समान मनुष्य अपनी गलतियाँ नहीं देखता, यदि किसी क्षण भी वह अपनी गलतियो पर विचार करने की चेष्टा करे, तो उसकी भूलों में सुधार के साथ साथ वह अपना जीवन पथ भी प्रशस्त बना सकता है।

आज महिलाओं का मान सवर्धन करते हुए कुन्ती और मदा-

ख़सा ऐसी माताओं का पूजन करना है।

युवतियो के गुणो को विकसित करते हुए सीता सावित्री सी सतियों का दर्शन करना है।

ध्रुव प्रह्लाद से बालकों की कर्त्तव्यनिष्ठा पर सदैव मोद भरना है। अर्जुन भीम से योद्धा बनकर निर्बलों की रक्षा करते हुए राष्ट्र मे अपूर्व शक्ति का सचार करना है। इसलिए प्यारे बन्धुओ! हमें कुरीतियों के नागपाश को तोड़ते हुए समाज को इस पैशाचिक परम्परा से मुक्त करना पड़ेगा। और जहाँ भी दहेज ऐसी दूषित प्रथाओ के प्रचलन का प्रस्ताव होगा, वहाँ सर्वसम्मति से पूर्ण शक्ति से घोर विरोध करना पड़ेगा।

जिस दिन हमारे ये सच्चे स्वप्न पूर्ण होंगे। उस दिन क्या नहीं होगा? घर घर में चैन की वशी वजेगी। नगर नगर मे मधुर प्रेम मिलन होगा। गाँव गाँव मे ऋद्धि सिद्धि आनन्द की उन्मुक्त सरिताएँ बहेंगी। कन्याएँ, बहिनें, माताएँ, महिलाएँ, एक स्वर से मनोहर गीतो के प्रत्येक स्वरो में पुरुषो के कल्याण की भावनाएँ प्रकट करेंगी। हमारा जीवन धन्य होगा।

"जयभारती"

(तालियों की तुमुलध्वनि में सभापति जी अपना स्थान ग्रहण करते हैं। आशा और प्रकाश दम्पती रूप मे अ यक्ष महोदय एवम् गुरुजनों का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए सभामंडप मे आते हैं;

ध्वनि, युवतियों की आत्महत्या की चीत्कार, अभिभावकों की निर्धनता की करुण पुकार सुन सुन कर कानों के परदे फट रहे हैं। आज मनुष्य के लिए उत्तुंग हिमगिरि,विशाल महासागर, और वनराज केशरी को अधीन कर लेना सहज है, किन्तु समाज की कुरीतियों का दमन करने में आज वह असमर्थ होरहा है।

जिस प्रकार श्वान सूखी सड़ी निर्मांस हड्डी में अपने रक्त को ही पान कर खुश होता है, उसी प्रकार अपने प्रियजन बन्धुओं से दहेज लेकर उनकी पुंजीभूत सुखराशि का पान कर अपने को कृतकृत्य समझना अज्ञान की पराकाष्ठा है।

जिस सूर्य मंडल से सारा जगत् प्रकाश प्राप्त करता है, वह भी रजनी के राज में अन्धकार में विलुप्त हो जाता है। जिस चन्द्रमंडल के प्रकाश में सारे तारागण चमकते हैं, वे भी दिन में अन्तर्हित होते देखे जाते हैं। सर्वव्यापी सदागति पवन भी स्थिर नहीं रहता।

महासागर की गगनचुम्बित लहरें भी कभी एक रूप में नहीं रहतीं। यह मनुष्य किसी से हठात् कोई चीज लेकर उसे स्थिर कायम करके सुख की अभिलाषा जो करता है, यह सिवाय बुद्धिमान्द्य के और क्या कहा जा सकता है?

दीपक तले अन्धेरे के समान मनुष्य अपनी गलतियाँ नहीं देखता, यदि किसी क्षण भी वह अपनी गलतियों पर विचार करने की चेष्टा करे, तो उसकी भूलों में सुधार के साथ साथ वह अपना जीवन पथ भी प्रशस्त बना सकता है।

आज महिलाओं का मान संवर्धन करते हुए कुन्ती और मदा-

सदा ऐसी माताओं का पूजन करना है।

युवतियों के गुणों को विकसित करते हुए सीता सावित्री सी सतियों का दर्शन करना है।

ध्रुव प्रह्लाद से बालकों की कर्त्तव्यनिष्ठा पर सदैव मोद भरना है। अर्जुन भीम से योद्धा बनकर निर्बलों की रक्षा करते हुए राष्ट्र में अपूर्व शक्ति का सचार करना है। इसलिए प्यारे बन्धुओं ! हमें कुरीतियों के नागपाश को तोड़ते हुए समाज को इस पैशाचिक परम्परा से मुक्त करना पड़ेगा। और जहां भी दहेज ऐसी दूषित प्रथाओं के प्रचलन का प्रस्ताव होगा, वहाँ सर्वसम्मति से पूर्ण शक्ति से घोर विरोध करना पड़ेगा।

जिस दिन हमारे ये सच्चे स्वप्न पूर्ण होंगे। उस दिन क्या नहीं होगा ? घर घर में चैन की वंशी बजेगी। नगर नगर में मधुर प्रेम मिलन होगा। गाँव गाँव में ऋद्धि सिद्धि आनन्द की उन्मुक्त सरिताएँ बहेगी। कन्याएँ, बहिनें, माताएँ, महिलाएँ, एक स्वर से मनोहर गीतों के प्रत्येक स्वरों में पुरुषों के कल्याण की भावनाएँ प्रगट करेंगी। हमारा जीवन धन्य होगा।

"जयभारती"

(तालियों की तुमुलध्वनि में सभापति जी अपना स्थान ग्रहण करते हैं। आशा और प्रकाश दम्पती रूप में अ नन्त महोदय एवम् गुरुजनों का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए सभामंडप में आते हैं।

और सब को यथायोग्य नमस्कार करते हैं। सब "युग युग जोड़ी चिरजीवी हो" ऐसा आशीष देते, सज्जन सुमनवृष्टि करते मंगल मन्त्र का सामूहिक उच्चारण करते हैं।)

स्वस्त्यस्तु ते कुशलमस्तु चिरायुरस्तु।
गोवाजिहस्तिधनधान्यसमृद्धिरस्तु ॥

(पटाक्षेप)

बरात

पात्र-परिचय

१ गणेशदत्त—संस्कृतिप्रेमी एक आलोचक पंडित
२ भोलाशंकर—जिज्ञासु मधुरभाषी पंडित
३ अमोलकचन्द—नीतिज्ञ वर के पिता
४ जयशंकर—प्रगतिवादी कन्या के पिता
बराती कवि प्रभृति

प्रथम दृश्य

स्थान—सँस्कृत पाठशाला

समय—प्रात

(सनावत स्टेशन से दो सो गज दूरी पर एक नवीन सँस्कृत पाठशाला भवन अभी अभी बनकर तैयार हुआ है, जिसकी तीन दिशाओं मे आठ कक्षा भवन और एक बड़ा हाल है। खुली दिशा मे विद्यार्थियों के खेलने का विस्तृत मैदान है, जिसके पीछे जंगल की शोभा बड़ी मनोरम मालूम पड़ती है।

आज अक्षय तृतीया के शुभ पर्व पर अमोलकचन्द जी के सुपुत्र गिरधारीलाल की बारात स्टेशन पर उतरी है, जिसमें लगभग ५० वरयात्री हैं। जिनका स्वागत करने के लिए गाँव के गण्यमान्य सज्जन बैंड बाजों के साथ आए हुए हैं। नगर परिभ्रमण के साथ बारात पूर्व निश्चित सँस्कृत पाठशाला भवन में ठहरने के लिए आती है। बरातियों की पूर्वप्राप्त नामावली के अनुसार प्रत्येक वर्ग के लोगों को भिन्न भिन्न प्रकोष्टों में ठहराने की पूर्ण व्यवस्था की गयी है, जिनकी नामावली प्रत्येक प्रकोष्ट द्वार पर अंकित करदी गई है।

प्रथम प्रकोष्ट मे पंडितवर्ग, द्वितीय मे सम्बन्धी लोग, तथा तृतीय मे दुलहा अपनी समवयस्क मंडली के साथ ठहरे हुए हैं। दो प्रकोष्टों मे व्यापारी तथा कर्मचारी वर्ग ठहरा है। एक प्रकोष्ट में सेवकों का समूह है। एक प्रकोष्ट Inquiry office है। और

आवसानिक प्रकोष्ठ को भंडार (Store) बनाया गया है।

हाल में सभा मडप की रचना बड़ी आकर्षक जान पड़ती है। प्रत्येक प्रकोष्ठ द्वार पर एक भृत्य खड़ा है, जो बारातियों की आवश्यकता की सूचना मैनेजर को Inquiry office मे देता है। मैदान मे कुछ सुन्दर कच्ची दूकानें बनाई गयी हैं। बारात को नवीन भवन में आधुनिक ढग से ठहराने का सुन्दर आयोजन देखकर सब चकित हो रहे हैं। चारों तरफ बड़ी चहल पहल है।

पडित वर्ग में से दो महानुभाव गणेशदत्त और भोलाशकर शास्त्री अनिर्दिष्ट भ्रमण के लिए निकलते हैं। वे जाकर प्रथम कच्ची दुकान पर खडे होते हैं, जिसके द्वार पर Bootpolish house लिखा हुआ है। कुछ जूते एव पालिश का सामान रखा है। चार व्यक्ति बारातियों के बूटों की पालिश करने को नियत किये गये हैं। जहाँ एक श्लोक लिखा है। गणेशदत्त श्लोक को जोर जोर से पढते हैं)

गणेश— सुखदाभयदं मार्गे,
पादत्राण मनोहरम्।
सदेप्सितार्थसिद्ध्यर्थम्,
बूटे पालिशमाचरेत् ॥

(कुछ व्यग में हँसते हुए) देखिये शास्त्री जी! आज मृतक चर्म से भी आगम वाक्य ध्वनित होरहे हैं। मच्छर और खटमल की तरह ये काले पीले बूट भी मेदिनी तल पर सर्वत्र स्वच्छन्द विचर रहे हैं। कैसी उलटी गगा बह रही है।

भोला—आज जूतों पर जनता की अधिक ममता है।

प्रथम दृश्य

स्थान—सँस्कृत पाठशाला

समय—प्रात·

(सनावत स्टेशन से दो सौ गज दूरी पर एक नवीन सँस्कृत पाठशाला भवन अभी अभी बनकर तैयार हुआ है, जिसकी तीन दिशाओं मे आठ कक्षा भवन और एक बड़ा हाल है। खुली दिशा में विद्यार्थियों के खेलने का विस्तृत मैदान है, जिसके पीछे जगल की शोभा बड़ी मनोरम मालूम पड़ती है।

आज अक्षय तृतीया के शुभ पर्व पर अमोलकचन्द जी के सुपुत्र गिरधारीलाल की बारात स्टेशन पर उतरी है, जिसमे लगभग ५० वरयात्री हैं। जिनका स्वागत करने के लिए गॉव के गण्यमान्य सज्जन बैंड बाजों के साथ आए हुए हैं। नगर परिभ्रमण के साथ बारात पूर्व निश्चित सँस्कृत पाठशाला भवन में ठहरने के लिए आती है। बरातियों की पूर्वप्राप्त नामावली के अनुसार प्रत्येक वर्ग के लोगों को भिन्न भिन्न प्रकोष्ठों मे ठहराने की पूर्ण व्यवस्था की गयी है, जिनकी नामावली प्रत्येक प्रकोष्ट द्वार पर अंकित करदी गई है।

प्रथम प्रकोष्ठ में पडितवर्ग, द्वितीय मे सम्बन्धी लोग, तथा तृतीय मे दुलहा अपनी समवयस्क मडली के साथ ठहरे हुए हैं। दो प्रकोष्ठो में व्यापारी तथा कर्मचारी वर्ग ठहरा है। एक प्रकोष्ट में सेवकों का समूह है। एक प्रकोष्ठ Inquiry office है। और

आवसानिक प्रकोष्ठ को भंडार (Store) बनाया गया है।

हाल में सभा मंडप की रचना बड़ी आकर्षक जान पड़ती है। प्रत्येक प्रकोष्ठ द्वार पर एक भृत्य खड़ा है, जो बारातियों की आवश्यकता की सूचना मैनेजर को Inquiry office में देता है। मैदान में कुछ सुन्दर कच्ची दूकानें बनाई गयी हैं। बारात को नवीन भवन में आधुनिक ढंग से ठहराने का सुन्दर आयोजन देखकर सब चकित हो रहे हैं। चारों तरफ बड़ी चहल पहल है।

पंडित वर्ग में से दो महानुभाव गणेशदत्त और भोलाशंकर शास्त्री अनिर्दिष्ट भ्रमण के लिए निकलते हैं। वे जाकर प्रथम कच्ची दुकान पर खड़े होते हैं, जिसके द्वार पर Bootpolish house लिखा हुआ है। कुछ जूते एवं पालिश का सामान रखा है। चार व्यक्ति बारातियों के बूटों की पालिश करने को नियत किये गये हैं। जहाँ एक श्लोक लिखा है। गणेशदत्त श्लोक को जोर जोर से पढ़ते हैं)

गणेश— सुखदाभयदं मार्गे,
पादत्राणं मनोहरम्।
सदेप्सितार्थसिद्ध्यर्थम्,
बूटे पालिशमाचरेत्॥

(कुछ व्यंग में हँसते हुए) देखिये शास्त्री जी ! आज मृतक चर्म से भी आगम वाक्य ध्वनित होरहे हैं। मच्छर और खटमल की तरह ये काले पीले बूट भी मेदिनी तल पर सर्वत्र स्वच्छन्द विचर रहे हैं। कैसी उलटी गंगा बह रही है।

भोला—आज जूतों पर जनता की अधिक ममता है।

गणेश—यह नई रोशनी का प्रभाव है। पश्चिमी सभ्यता की मेहरबानी है। आज प्राचीन संस्कृति के उन्नत शिखर का सुन्दर निर्झर निर्मल जल जमीन पर मटमैला काला बन कर बह रहा है। केसर, कुकुम, चन्दन, अर्गजा का दिमाग को तरोताजा करने वाला पुनीत लेपन ही बूटों की लाल काली पालिश का रूप धारणकर विलासिता की ओर अग्रसर कर रहा है।

आश्चर्य। आश्चर्य।। जमाने की रंगत को देखते अन्तर्द्वन्द्व पैदा होता है। कलेजा मुँह पर आने लगता है। जिनके घरों में चूहे चीटीं की टाँग पर दंड पेलते हैं, अंग ढकने को पर्याप्त वस्त्र नहीं हैं, वे भी रग बिरगे चार जोड़ी जूते घर में रखने में अपनी शान समझते हैं।

भोला—इसे लोग पादत्राण या उपानत् (जो पास में बाँधा जाय) कहते हैं।

गणेश—यह शीतप्रधान देशवासियों का अनुकरण भारत के उष्ण देश निवासियों को कभी लाभप्रद सिद्ध नहीं होसकता। मनुष्य के गुण तो ग्रहण करने चाहिये, किन्तु केवल बन्दर की तरह नकल करने से अभीष्ट सिद्ध नहीं हो सकता।

आज के भद्रलोगों को जूतों की पालिश पर बडा अनुराग रहता है। जरा भी पालिश के बिगड़ने पर उनके चेहरे की पालिश बिगड़ने लगती है। अच्छी पालिश के लोभी अमीरजादों के Calf-leather shoe के अभाव में पैरो में फाले होने लगते हैं। चमडे की प्रत्येक वस्तु प्रयोग में लाने में आज प्रगति मानी जाती है। शर्मा वर्मा सभी जूते और चमडे का व्यवसाय करने में अपना

गौरव समझने लगे हैं। जिसके परिणाम से गोभक्ति प्रधानदेश में गोवंश का अत्यधिक ह्रास होने लगा है। पवित्र-मन्दिर, गुरुद्वारों मे भी चर्म का परहेज नहीं--जिधर देखिये उधर "सर्व चर्ममय जगत्" दृष्टिगोचर हो रहा है।

भोला—इसे युग प्रभाव के अतिरिक्त और क्या कहा जासकता है ?

गणेश—पहले मनुष्य संसार को कुछ देकर जाते थे। आज कुछ लेकर जा रहे हैं। प्राचीन सँस्कृति और सभ्यता के अवशेष का अवशेष शेष होरहा है।

काव्यकला, चित्रकला, सगीतकला, मूर्तिकला, स्थापत्यकला से भी वूटकला अधिक आदत होरही है। आज इस प्रसन्नता मे मूर्खता खिलखिला कर हँस रही है, और सभ्यता सिसक सिसक कर रो रही है।

भोला—(दोनों आगे बढते हुए) चलो—आगे देखें क्या होरहा है ?

दोनों दूसरी दुकान पर जाते हैं, जिसके द्वार पर बडे बडे अक्षरों में 'लिखा हुआ है --

"Hair cutting Saloon"

दुकान फर्नीचर से सजी है। पखा चल रहा है। ५ व्यक्ति क्षौर कर्म के लिए नियुक्त हैं। सामने की दिवाल पर एक श्लोक है, जिसे गणेशदत्त गौर से पढने लगते हैं।)

गणेश—

क्षौरकर्म प्रभावेण,
राजते मुखमण्डलम्।
वृद्धो युवा भवेन्नित्यम्,
समाकर्ष पदे पदे॥

यह सगीन, रगीन, पिक्चर Picture देखिये। यहाँ रूप तथा सौन्दर्य देव की उपासना से कायाकल्प का अनुष्ठान होरहा है। आज की भाषा मे इसे पुरुषत्व के चिह्न दाढ़ी—मूँछ चुटिया सफाचट्ट शल्यगृह "Opuration Theatre" कहें तो असगत न होगा।

भोला—यह कार्य तो स्वास्थ्य और स्वच्छता से सम्बन्ध रखता है।

गणेश—नहीं जी। यहाँ विलासी पुरुष यौवन वसन्त के मधुर मिलन सौन्दर्य कानन में पूर्णिमा की मनोहर चाँदनी में एक प्रकाश—युक्त तरल तारा बनकर चमकना चाहते हैं, इनकी दाढ़ी मूंछ सफाचट्ट युवावस्था अल्हड सौन्दर्य के पीछे आँखें बन्दकर सरपट दौड़ रही है।

आज प्रगतिप्रधान देशो में पाकशाला—पाठशाला—धर्मशाला की सारी सख्या मिलाकर भी चौरकर्म शाला की सख्या के सम्मुख नगण्य है।

भोला—आज इसका समर्थन न करने पर पढ़े लिखे लोग मूर्ख गँवार, जाहिल कहकर पुकारने लगते हैं।

गणेश—आज के B A M A. शास्त्री आचार्य शिक्षित भी प्रात काल चौरकर्म के लिए चिन्तित होने लगते है। वे कभी कभी वदन पर साबुन लगाते हुए मन ही मन सोचने लगते है, कि महिलाओं का जीवन धन्य है, जो इस आफत से सदा के लिए मुक्त है। बिचारा पुरुष यदि चार दिन भी गफलत करजाय तो इस रोग के प्रकोप से काला भालू या वनमानुष सा नजर आने लगता है।

एक समय मनुष्य गुणो द्वारा पूजे जाते थे—आज पुरुषार्थ हीन पुरुष सुन्दर वेशभूषा द्वारा ही अन्धकार में तारा बनकर चम-

कना चाहते हैं। पत्थर पर पुष्प बनकर खिलना चाहते हैं। बिना पुरुषार्थ, जीवन वीणा के सुमधुर स्वरो को छेड़ना चाहते है।

आज का भावुक समाज सौन्दर्य कला का उपासक--चेतन को छोड़कर जड़ की पूजा कर रहा है।

भोला—जमाना रंग बदल रहा है। चलो—आगे देखें—क्या तमाशा है?

(दोनों तीसरी दुकान पर जहाँ रंगीन अक्षरों में लिखा है।

"Hot and cold drinks

चाय घर बड़ा सुन्दर सजा है। रेडियो बज रहा है। कुछ व्यक्ति नम्रतापूर्वक चाय आदि सेवन का सादर आग्रह कर रहे हैं। इस घर में बिजली के छोटे बल्बों के अक्षरों से एक श्लोक लिखा है, जिसे गणेशदत्त ध्यान से पढने लगते हैं)

गणेश— कृष्ण तृण जल चोष्णम्,
फुत्कारै यदि पीयते।
शीतोष्णदु ख निर्मुक्तै,
जीव्यते शरदां शतम्।

यह लीजिए—अब प्राणायाम योगाभ्यास की आवश्यकता नहीं—केवल चाय पान करके ही शत जीवेम शरद मन्त्र को सार्थक कीजिये, और मरु में अमृत गंगाजल पीजिये। अब चाय रूप अग्नि भी स्नेह शीतल सुधा बनने लगी—चित्रपट में सुन्दर सरोवर को देखकर ही तृपातुर दर्शकों की प्यास बुझने लगी—आज मानव का अधिकार खिल खिलाकर हँस रहा है, किन्तु परिणाम फूट फूट कर रोरहा है। आज चाय चमन में ससार का अधिकाश मानव बेखबर सोरहा है।

आठ आने रोज का मजदूर भी इस चाय के अखाडे मे धूलि लगा कर भीमसेन बनना चाहता है।

आंधी मे वृक्ष हिलते हैं—पर्वत नही हिलते, किन्तु आज चाय की आँधी मे बुद्धिमान्, मन्दमति पहलवान गुणी, निगुणी, स्त्री पुरुष, नपुंसक सभी झूमते नजर आरहे हैं।

कुशासन, कम्बल, कमंडलधारी सब को चाय न मिलने पर उनकी उम्मीदो का बलिदान होने लगता है, और सभी अरमान धराशायी होजाते हैं।

भोला—लोग कहते है—"चाय पीना स्फूर्तिदायक है"।

गणेश—विषधर से भुजग ही होते हैं। अर्क और धतूरे मे विषाक्त फल ही लगते हैं। नशे का परिणाम कुछ अच्छा नहीं होता। आज पढे लिखे तथा अनपढ सबों ने इस विषैले नशे को पौष्टिक पदार्थ मान लिया है।

सूखी घास गर्म पानी है।
अंग्रेजो की मेहरबानी है॥

भोला—लोगो की धारणा है, यह बडी सस्ती पडती है।

गणेश—आँखों देखी बात है। जिसके घर में साठ रुपया मासिक आय है, उसके तीस रुपये प्रतिमास केवल चायपान में लग जाते हैं। उनको दरिद्रता के प्रकोप की चिन्ता नहीं। वे चाय पर बलिदान होना नहीं छोडते। वे कर्ज का अपमान सहते हैं, किन्तु इस नशे से मुख नहीं मोडते। भोजन की सारी पौष्टिक स्वादिष्ट सुन्दर धाराएँ चाय सागर में समा रही हैं।

प्रकृति नियम के पालन से प्रसन्न रहती है। प्यास के समय

पानी, भूख के समय भोजन की आवश्यकता पड़ती है; किन्तु आज हर समय हर जगह दावत में भी केवल चाय द्वारा ही मेहमानों की प्यास तथा भूख बुझाने की आवभगत करना सभ्यता की चरम सीमा समझी जारही है।

भोला — नवयुग परिवर्तन में बहुत बातें देखने को मिलेगी।

(दोनों आगे की दुकान पर जाते हैं। दुकान पर सुनहले अक्षरों में "तमाखू बहार" लिखा हुआ है। दो व्यक्ति धूम्रपान, सुगन्धित तमाखू खैनी, नस्य, सुरती बरातियों को बड़े प्रेम से सेवन करने का सादर आग्रह कर रहे हैं। एक शीशे के बोर्ड पर श्लोक लिखा है, जिसे गणेशदत्त पढ़ते हैं।)

गणेश— धूम्रपान चिरायुष्यम्,
शान्तिद दु खहारकम्।
भद्राणां सभामध्ये,
शोभते चन्द्रवत् सदा।

देखिये। आज अग्नि भी शीतल बन गयी। जिसे आज मनुष्य बड़े शौक से पी पीकर आनन्द का अनुभव कर रहा है।

धूम्रपान के धुएँ की काली घटा में दामिनी को दमकते देखिये।

खैनी के पीतपत्रो को मधुर-मधुर मस्ती के साथ हाथों पर चिपन्ते देखिये।

नस्य को सूँघ-सूँघ कर त्रिकुटी को भेदन करने वाली सुगन्ध को गमकते देखिये।

सुरती पान में डालकर मुँह फुला फुला कर पान खाने वालों की झमक को देखिये।

ये तमाखू के दीवाने नन्दनकानन के सौरभयुक्त पुष्प की सुगन्धित वायु की बहार, केवल तमाखू की पत्तियों को सूँघने और सेवन करने से लूट रहे हैं।

क्वचित्थुका, क्वचिद्धुका,
क्वचिन्नासाप्रवर्त्तिनी।
एषा त्रिपथगा गंगा,
पुनाति भुवनत्रयम्।

भोला—यह तो हमारी पुरातन परम्परा है।

गणेश—इसका सर्वत्र विषैला भयंकर प्रभाव पड़ रहा है।

होनहार विद्यार्थी अधिक रूप में, धूम्रपान के धुएँ से पल रहे हैं।

आदरणीय शिक्षक गण भी इसे, सूँघ सूँघ कर अकड़ अकड़ कर चल रहे हैं।

मेहनती मजदूर भी इसे बड़े, प्रेम से खा खाकर उछल रहे हैं।

सरल नागरिक भी इसके बाहरी, आडम्बर को देखकर बहल रहे हैं।

अवसरवादी पथ प्रदर्शक नेता भी, इसका पान के साथ सेवन कर मचल रहे हैं।

सारे के सारे इस आग के समुद्र में लकड़ी की नौका पर आरूढ होकर शीतल मलयज के सुखद स्पर्श के अनुभव की अनोखी

कल्पना कर रहे हैं।

भोला—इसके प्रतिदिन के खर्चे ने गरीबो की कमर तोडदी है, और अमीरो की मूँछें मरोड़दी हैं।

गणेश—यह पश्चात्ताप का विषय है। आज इसे सेवन करने वाले भी समाज में अपने को गगाजल के समान पवित्र और निर्मल कहलाने का दावा रखते हैं। कैलाश शिखर के समान अपने को शुभ्र, श्रेष्ठ और उन्नत मान रहे हैं। मानसरोवर के समान अपने को सुशीतल और दिव्य जान रहे हैं। जिसे केवल भ्रम से जीवन सुधा को अग्निदेव के समर्पण के सिवाय और क्या कहा जासकता है।

भोला—अब तो समाज की सारी की सारी मशीनरी खराब होरही है। कोई क्या कर सकता है।

(दोनों आगे बढ़ते हैं। स्नानघर की सुन्दर व्यवस्था देखते हुए पाकशाला के मनोहर भवन की तरफ जाना चाहते हैं। पीछे से किसी बराती के पुकारने पर दोनों बरात में सम्मिलित होने को जनवासे लौट आते हैं)

(पटाक्षेप)

द्वितीय दृश्य

स्थान—पाठशाला का हाल

समय—मध्याह्न

(विवाह कार्य के सम्पन्न होने के दूसरे दिन बरातियों का अभिनन्दन करने के लिए पाठशाला के विद्यार्थियों की तरफ से इसी हाल में एक संस्कृत कविसम्मेलन का आयोजन किया गया है। यद्यपि कविसम्मेलन का समय दो बजे का है फिर भी बराती एक बजे ही आकर हाल मे बैठ गये हैं। परस्पर सब लोग बरात के स्वागत करने वालो की व्यवस्था की मुक्तकंठों से भूरि भूरि प्रशसा कर रहे हैं। पडितवर्ग भी अपने समुदाय में समाज की वैवाहिक रीति रिवाज पर वार्तालाप कर रहा है। गणेशदत्त गंभीरमुद्रा में सबकी बातें बडे ध्यान से सुन रहे हैं, भोला गणेशदत्त जी से बडे प्रेम से वार्तालाप करने में सलग्न हैं)

भोला—पंडित जी! अभी कविसम्मेलन आरंभ होने में विलम्ब है। हम लोग आपके श्रीमुख से विवाह और विवाह की रूढियों पर कुछ सुनने को अत्यन्त उत्सुक हैं।

गणेश—विषय बड़ा गंभीर है; फिर भी परम आवश्यक है। आप लोग ध्यान से सुनें। मैं संक्षेपत. इस विषय पर अपना विचार व्यक्त करता हूँ।

विवाह क्या है—

पुरुष जीवन की ऊँची २ चोटियों पर चढ़ने का सँकल्प करता

है ; इस कठिन कार्य को पूर्ण सफलीभूत बनाने के लिए उसे किसी, अतिरिक्त विशेष शक्ति के सहयोग की आवश्यकता अनुभूत होती है ; जिसे प्राप्त करने के लिए वह शक्तिस्वरूपा, किसी सहधर्मिणी का वरण करने का विचार करता है , जो उसे दुर्गम पथ पर चढ़ते २ श्रान्त होजाने पर, तृषित होने पर निर्मल झरने के रूप में शीतल सलिल रूपी स्नेहांचित प्रेमसुधा पिलाकर उसकी थकान और प्यास दूर करती हुई नव चेतना की स्फूर्ति का संबल प्रदान करे।

भोला—आपने वैवाहिक आवश्यकता का बड़ा ही सुन्दर रूपक उपस्थापित किया है ।

गणेश—यह शक्ति सुकुमारी पवित्र प्रेम का स्वरूप धारण कर दु:ख वेदना में मित्र और बन्धु बन जाती है , सुख वैभव में स्वामिनी और सजनी सी दृष्टिगोचर होने लगती है। सानिध्यसेवा में पूर्ण चन्द्र और सुखद स्पर्श चान्द्रमसी बनकर स्नेह-उदधि की उत्ताल तरंगों पर सुख विहार करने के अपूर्व आयोजन बनाती है। यह शक्ति-बाला विश्व कुन्ज की कुमुदिनी है ; जगतीतल की आधार शिला है ; नर रत्नों की खान है , और गृहस्थ जीवन की सुखद राग रंजित अरुणिमा है ।

इस नववधू के कर्त्तव्य वसन्त कानन में ऋद्धि सिद्धि सदा निवास करती हैं। अतिथि कल्पवृक्ष शीतल छाया और अमर फल प्रदान करते हैं। घर में"स्वाहा" "स्वधा" शब्द सुखद सगुण विहग बनकर कर्त्तव्य कानन कुंजो में कलरव करते रहते हैं। पवित्र शस्यशामला भाव भूमि पर मनोकामना रूपी कामधेनु फल अनुगामिनी नन्दिनी के साथ स्वच्छन्द विचरती है। श्री कृष्ण लीला ललित

रम तथा प्रसंग-शीकर से निर्निमेष श्रवण सरोवर सतत लहराते नजर आते हैं।

भोला—यह गृहस्थ सुख तो अपवर्ग के सुख से भी अधिक आनन्ददायक है।

गणेश—इस नित्यानन्दकरी वंशवर्द्धनकरी गृहाधीश्वरी के अभिनन्दनार्थ पुरुष वडे उमग से सुन्दर वीर वस्त्र धारण कर, आभूषणो से युक्त, सुन्दर अश्व पर आरूढ होकर स्वर्ण-छत्र धारण करते हुए अनेक प्रतिष्ठित सम्बन्धियों एव नागरिको को साथ लेकर भिन्न भिन्न प्रकार के वाद्ययन्त्रों को श्रवण सुखद मनोहर ध्वनि मे सबकी शुभ कामनाओ के साथ सुन्दर बारात के रूप मे कन्या के द्वार पर जाकर खड़ा होता है, और वेदध्वनि के बीच अग्नि के सम्मुख कन्यावरण की प्रतिज्ञा करता हुआ पाणिग्रहण करता है।

भोला—आपने तो बारात की परिभाषा में सारे विवाह के रहस्य को बड़ी सुन्दर उपमाओ के साथ अभिव्यक्त किया है। अब कृपा कर प्रचलित रूढियो पर प्रकाश डालने की कृपा करें, तो अतीव उत्तम हो।

गणेश—आज कल रूढ़ियो का स्वरूप विकृत एव बड़ा उपहास्यास्पद बन रहा है।

विवाह समाप्त होने पर एक दुलहा अपनी वधू के साथ स्वगृह के प्राङ्गण मे आकर खड़ा हुआ। सारे कुटुम्बी जन उसका स्वागत करने के लिए वहाँ उपस्थित थे, अचानक एक बिल्ली उस आँगन को पार करना चाहती थी, जिसे वधू की सास ने देख लिया। भोज्य पदार्थों के नुकसान के भय से तथा अपशकुन के कारण वधू की सास

ने बिल्ली के पीछे जाकर उसे एक टोकरी से ढँक दिया, जिसे नववधू बड़े गौर से देख रही थी। कुछ वर्षों के बाद उस प्रौढा वधूने अपनी सन्तान के विवाह मे भी बिल्ली को टोकरी के नीचे ढँकने की प्रथा का अन्धानुकरण किया, और उसी दिन से यह प्रथा उसके कुटुम्ब मे प्रचलित होगई। रूढियो की उत्पत्ति की यह मूल कथा है।

एक समय एक गाँव के लोग दूसरे पार्श्वस्थ गाँव के लोगो को कन्यादान देते थे। बाराती लोग गाड़ियों पर सवार होकर पहुँचते थे। दुलहा को विशेष आदर प्रदान करने के निमित्त, लम्बी मजिल पार करने के लिए सुलभ अश्वारोहण कराया जाता था, किन्तु आज न लम्बी मजिल ही पार करनी पड़ती है। न सुन्दर अश्व ही सुलभ हैं, फिर विवाह मे अश्व का होना आवश्यक ही समझा जाता है, यह केवल रूढि की गुलामी के सिवाय और क्या हो सकता है?

भोला—प्राचीन काल मे सहभोज के विषय में क्या प्रथा थी।

गणेश—प्राचीन काल में रत्नगर्भा वसुन्धरा भारतभू में अन्न की बहुतायत थी, दूध-दही का क्रय विक्रय नही था, समस्त वैवाहिक कृत्यों में दूध-की मिठाइयों से बड़े बड़े भोज की व्यवस्था की जाती थी। विवाह के प्रत्येक कार्य में मिठाई आदि के लेन देन से ही कर्मचारियों को सन्तुष्ट किया जाता था, किन्तु आज जब कि-अन्न औषध के परिमाण में मिल रहा है, घी दूध की नदियाँ जम्बालशेष रह गई है। ऐसी विकट परिस्थिति में बड़े बड़े सहभोजो का धर्म की दुहाई देकर आयोजन करना, मिठाई बाटकर एक बेढगा प्रदर्शन करना एक रूढिवादी भीरु-हृदय के सिवाय और क्या कहा जासकता है?

आज ऐसी रूढियों की चक्की से गरीब जनता पिस पिस कर चूर्ण बन रही है। कुलीन बरानो की कन्याओ का द्वार द्वार पर निरादर हो रहा है। ऐसी सज्जनो के हृदयाकाश में उदित अगस्त का रूढि तारा अजस्र प्रवाहित समाज की स्वच्छस्नेह-सरिता को सुखा रहा है। इसलिए समाज में व्याप्त ऐसी रूढियो के सुधार की परमावश्यकता है। इन परम्परागत परिस्थितिजन्य रूढियो को धर्म का नाम देना कभी सगत एवम् उचित नहीं माना जासकता।

(सब हर्षध्वनि करते हैं)

भोला—पण्डित जी आज तो आपने बारात और रूढिवाद पर बडी ही शिक्षाप्रद आलोचना की। हमलोग आपकी इस कृपा के लिए चिरऋणी रहेंगे। (इतने मे संस्कृत पाठशाला के प्रधानाध्यापक श्री ईश्वरानन्द शास्त्री कुछ विद्यार्थियों के साथ हाल में प्रवेश करते हैं। कवि सम्मेलन का समय निकट समझकर सब बरातीगण बड़ी शान्ति के साथ अग्रिम कार्यवाही की प्रतीक्षा करते हैं। कन्या के पिता जयशकर भी कवि-सम्मेलन मे उपस्थित हैं। श्री गणेशदत्त जी के सभापति निर्वाचित होजाने पर ईश्वरानन्द शास्त्री खड़े होकर कार्यवाही आरंभ करते हैं।)

ईश्वरानन्द —आदरणीयाः महानुभावा !

अस्माकं परमसौभाग्यम् अस्ति, यत् भवता सेवाया सुखदावसर. संलब्ध.। सम्प्रति संस्कृत—कविसम्मेलनं प्रारभ्यते। तत्र सर्वप्रथमं परमानन्द., सोमानन्द', ब्रह्मानन्द, विद्यानन्द' पद्मानन्दश्च महाविद्यालयस्यछात्रा सामूहिक मगलाचरणम् करिष्यन्ति ।

(छात्राः उत्तिष्ठन्ति)

छात्रा·— (प्रार्थना-मुद्रया)

विनीतचौरं नवनीतचौरम्,
कादम्बनीश्यामलदीप्तिचौरम् ।
सुकर्म--चौर भवकर्म--चौरं,
चौराग्रगण्यं शिरसा नमामः ॥

❀　❀　❀　❀

सुवस्त्रचौरं भवतापचौरम् ,
भक्तानुरक्तं जनप्रीतिचौरम् ।
सुवाक्यचौरं त्रयताप--चौरम्,
चौराग्रगण्यं शिरसा नमामः ॥

❀　❀　❀　❀

(सर्वे छात्रा सकरतलध्वनि उपविशन्ति । अध्यक्षस्य निर्देशेन अवधविहारी "आभूषणम्" शीर्षक कविताम् पठितुमुद्यमते)

अवधविहारी·—

पादस्य भूषणं बूट,
चश्मा चाक्षुषभूषणम् ।
हस्तस्य भूषणं चुरुटम् ,
थैंक यू (Thankyou) सर्वस्य भूषणम् ॥

भोगाभूषण मरविम, (Service)
कुर्सी स्थानस्य भूषणम् ।
दरिद्राभूषणं चार्त्ति ,
धनी ना मदभूषण. ॥

नराणां भूषणं नेता,
नेतॄणां भूषणं दलम् ।
दलस्य भूषण पत्रम् ,
पत्रं शासन भूषणम् ॥

(करतलध्वनि भवति । अवधिविहारी स्वासन गृह्णाति ! अध्यक्षमहोदयस्याज्ञया गोपालकृष्ण "कुर्सी" विषयमवलम्ब्य कविता पठितुमुत्तिष्ठति)

गोपालकृष्ण — पदातुराणां न गुरुर्नबन्धु
दलातुराणां न भय न लज्जा ।
"वोटा" तुराणां न सुख न निद्रा,
"नोटा"तुराणां न रुचिर्न वेला ॥

निन्दारूपं कुनेतृणाम्,
जनतारूपं दुराग्रह. ।
"कुर्सीरूपं कुरूपाणां,
मिथ्या सर्वस्य रूपकम् ॥

गुणवैभवसम्पन्ना,
विशालकुलसंभवा ।
"कुर्सीं" विना न शोभन्ते,
नेतार किंशुका इव ॥

❀ ❀ ❀ ❀

कुर्सी नाम नरस्य रूपमधिकम्,
प्रच्छन्नगुप्तं धनम्,
कुर्सी भोगकरी सदासुखकरी,
कुर्सी गुरूणां गुरु. ।
कुर्सी वन्धुजनो विदेश–गमने,
कुर्सी परा देवता ।
कुर्सी कामदपूजिता ननु धनम्,
कुर्सीविहीन पशु ॥

❀ ❀ ❀ ❀

(गोपालकृष्ण उपविशति । अध्यक्षमहोदयस्याज्ञामादाय मधुसूदन भारती "द्रव्यम्" इति कविता पठितुमारभते)

मधुसूदन — द्रव्यस्य तुल्यं न शरीरपोषणम्,
द्रव्यस्य तुल्य न शरीरशोषणम् ।
द्रव्यस्य तुल्यं न शरीरतोषणम्,
द्रव्यस्य तुल्य न शरीरभूषणम् ॥

भोगाभूषण मरविस, (Service)

कुर्सी स्थानस्य भूषणम् ।

दरिद्राभूषणं चात्ति,

धनी ना मदभूषण ॥

नराणां भूषणं नेता,

नेतृणा भूषणं दलम् ।

दलस्य भूषणं पत्रम्,

पत्रं शासन भूषणम् ॥

(करतलध्वनि भवति । अवधिविहारी स्वासन गृह्णाति । अध्यक्षमहोदयस्याज्ञया गोपालकृष्ण "कुर्सी" विषयमवलम्ब्य कवित' पठितुमुत्तिष्ठति)

गोपालकृष्ण — पदातुराणा न गुरुर्नबन्धु

दलातुराणां न भयं न लज्जा ।

"वोटा" तुराणा न सुख न निद्रा,

"नोटा"तुराणा न रुचिर्न वेला ॥

निन्दारूपं कुनेतृणाम्,

जनतारूपं दुराग्रह. ।

"कुर्सीरूपं कुरूपाणां,

मिथ्या सर्वस्य रूपकम् ॥

गुणवैभवसम्पन्ना,

विशालकुलसंभवा ।

"कुर्सी" विना न शोभन्ते,

नेतारः किंशुका इव ॥

कुर्सी नाम नरस्य रूपमधिकम्,

प्रच्छन्नगुप्तं धनम्,

कुर्सी भोगकरी सदासुखकरी,

कुर्सी गुरूणां गुरुः ।

कुर्सी बन्धुजनो विदेश—गमने,

कुर्सी परा देवता ।

कुर्सी कामदपूजिता नतु धनम्,

कुर्सीविहीनः पशुः ॥

(गोपालकृष्ण उपविशति । अध्यक्षमहोदयस्याज्ञामादाय मधुसूदन भारती "द्रव्यम्" इति कविता पठितुमारभते)

मधुसूदन — द्रव्यस्य तुल्यं न शरीरपोषणम्,

द्रव्यस्य तुल्यं न शरीरशोषणम् ।

द्रव्यस्य तुल्यं न शरीरतोषणम्,

द्रव्यस्य तुल्यं न शरीरभूषणम् ॥

नास्ति द्रव्यसमो बन्धु ,
नास्ति द्रव्यसमा गति' ।
नास्ति द्रव्यसमं भाग्य ।
नास्ति द्रव्यं विना सुखम् ॥

× × × ×

अभिवादनशीलस्य,
नित्य "अफसर" सेविन ।
चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते,
द्रव्य मानं यशो बलम् ॥

× × × ×

रे चित्त ! चिन्तय चिर चरणौ धनस्य,
पारं गमिष्यमि यतो कुलसागरस्य ।
कर्त्तव्यधर्मौ न हि ते सहायौ,
सर्वं विलोकय सखे मृगतृष्णिकाभम् ॥

× × × × ×

(करतलध्वनिमध्ये मधुसूदन स्वस्थानग्रहण करोति । नर्वदाशकर अध्यक्षमहोदयस्य वचनेन "सुखि जीवनम्" इति शीर्षक-कविता पठति)

नर्वदाशंकर — मद्यपानं सुभद्राणाम्,
केवल सुखवर्धनम् ।
दासं यदि भवेन्नित्यम्,
पुनर्दु:खं न विद्यते ॥

वृथा विद्या विना फैशन,
वृथा ज्ञानम् विना पदम् ।
वृथा सेवा विना स्वार्थम्,
वृथा चायुर्धनं विना ॥

× × × ×

येषा न बूट न हैट न कोटम्,
पैन्टं न पेन न वाच न कारम् ।
ते मृत्युलोके भुवि भारभूता,
मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति ॥

× × × ×

(हर्षध्वानर्जायते पुन पाठ पुन॰ पाठ इति महानाग्रहो भवति। कवि पाठ कृत्वा स्वस्थानं गृह्णाति। अनलकुमार॰ अध्यक्षस्यानुमति प्राप्य "छात्रजीवनम्" स्वकविताम् पठति)

अनलकुमारः— छात्रे च गुणा सर्वे,
दोषोऽध्यक्षे समन्तत. ।
तस्मात् सहस्राध्यक्षेपु,
एक छात्रो विशिष्यते ॥

× × × ×

लालयेत् पचवर्षाणि,
दशवर्षाणि ताडयेत् ।
प्राप्ते तु षोडशे वर्षे,
छात्रे मित्रवदाचरेत् ॥

देशसेवा देशभक्ति,

छात्रे वचसि सर्वदा।

जल भित्वा यथा पद्मम्,

पाठं भित्वा तथैव ते॥

× × × ×

(अनलकुमारः तिष्ठति। अध्यक्षस्यानुमतिमादाय ताराकुमारः कवितापाठमाचरति॥)

ताराकुमारः— रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातम्,

भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंकजश्री।

इत्थं विचिन्तयति अंजुघटे द्विरेफे,

"नो नीड" हन्त! गज उद्धरणे प्रवृत्त॥

× × × +

या चिन्ता विविधा च पाठपठने,

डिग्री सदाप्रापणे

या चिन्ता बत गद्यपद्य रचने।

उच्चै सभाभाषणे,

सा चिन्ता कृषि कर्म शर्म करणे।

व्यापारवृत्तौ यदि,

का चिन्ता तव द्वारि द्वारि भ्रमणे।

आजीविका—प्राप्तये

कृशो हीनो, दीनो वसनरहितो कार्यविकलो।
न पादत्राणञ्च वहति भुवि भार नवनवम्,
क्षुधाक्षामो श्रान्त भ्रमति भुवने भोजनपरः।
न लभ्यैषा भृत्या हतमपि च हन्त्येव पठनम्॥

(ताराकुमार उपविशति अनुमतिमासाद्य शिवचरणदास॰ उत्थाय "सफलजीवनम्" कविता श्रावयति)

शिवचरणदास — येषामेकूट्ट्रे सपादे जनजनमहिते,
नास्ति भक्तिर्नराणाम्।
येषा नृत्यार्धनग्ने विलुलितजघने,
लाडरे नैव नेत्रे।
येषा मद्याम्बुपाने मधुमयचुरुटे,
नानुरक्ता रसज्ञा,
धिक्तान् धिक्तान् धिगेतान् कथयति
सतत वादनस्थो मृदग॰॥

× × × ×

आढ्यस्याचरणं कुलं नहि वय॰
विद्या धनेशस्य का
श्रेष्ठिन्या॰ किमु नाम रूपमधिकम्
क्स्तित् सुदाम्नोऽगमम्
वंश को धनिकस्य प्रोज्ज्वलतरः
तुन्दस्य किम् पौरुषम्।
द्रव्यै॰ तुष्यति केवल न तु गुणः
द्रव्यप्रिया संसृति॰॥

द्रव्य यस्य पिताऽक्षमा च जननी,

माया चिर गेहिनी ।

लोभ सूनुरय घृणा च भगिनी ,

भ्राता मनोऽसंयम· ।

शय्या भूमितल दिशासु वसन,

निन्दामिष भोजनम् ।

एते यस्य कुटुम्बिन श्रृणु सखे ।

कस्माद् भय भोगिन· ॥

× × × ×

(शिवचरणदासो विरमति । तत अनुमतिमादाय जानकीशरण· "प्रगतिपथ." इति कविता पठितु सन्नद्धो भवति)

जानकीशरण —

शरीरस्वरूप तथावै कलनम,

यशश्चार चित्र धन मेरुतुल्यम् ।

चुरूट न चाय विधत्ते न ड्रिकम्

तत कि तत. कि तत कि तत. किम् ।

× × × ×

न भोगे न योगे न वा वाजिराजौ

न कान्तामुखे नैव वित्तेपु चित्तम् ।

चुरूट न चाय विधत्ते न ड्रिक्म्

तत. कि तत. कि तत कि तत. किम् ॥

षडगादिवेदो मुखे शास्त्रविद्या,
कवित्वादिगद्य सुपद्य करोति ।
चुरूट न चाय विधत्ते न ड्रिंकम्,
तत किं तत किं तत किं तत. किम् ॥

× × × ×

(पुन पाठ पुन पाठ इति जनरवो भवति पुन कवितां पठित्वा जानकीशरण उपविशति । तत· अध्यक्षमहोदय, सधन्यवाद व्याख्यातुम् उत्तिष्ठति ।)

सभाध्यक्ष —प्रगतिशीला नुशीला सज्जना ।

अद्य इदम् परमसुन्दरम् रसमयम् समाकर्षकम् शिक्षाप्रदम आयोजनम् पण्डितमण्डनस्य धारानगरीतिलकस्य वाग्देवतावतारस्य राज्ञ भोजदेवस्य समय स्मारयति ।

सकल कक्षा निपुणेन विद्याव्यसनेन छात्रवर्गेण य वाक्चातुरी परिचय दत्त स विस्मृत्यापि न विस्मर्तव्यो भविष्यति ।

कविभि वर्तमानकालिकीं परिस्थितिम् अवलम्ब्य या व्यङ्ग्य पूर्णा शिक्षाप्रदा सरसा सरलाश्च कविता. श्राविता. । तेनसर्वे ब्रह्मास्वादसहोदरे परमानन्दाम्भोधौ निमग्ना ।

अनेन सरस्वतीसमाराधनेन स्वागतम् जातम् तदन्यत्र दुर्लभम्

अहम् वरपक्षत ताराकुमार शिवचरणदास जानकीशरणेभ्य च स्वर्णपदकानि दातुम् उद्घोषयामि । एतदायोजने साहाय्यमाचरताम् अध्यापकानाम् कृतेऽपि शिक्षणपद्धतिव्यवस्थानुशासनै परम

प्रीत. सन् अहम्-हार्दिक साधुवादम् उपहरामि।

विजयताम् विजयताम्

सुरभारती।

ॐ हरि शरणम्। शांति शांति शांति।

(व्याक्षेप)



तृतीय दृश्य

स्थान—जयशंकर का गृह प्राङ्गण

समय—अपराह्न काल

प्रेम दीपक जिस मानसभवन में प्रकाशित है; वह कोटि कन्दर्प से अधिक लावण्यमय है, सहस्र शशाङ्कों से अधिक सुशीतल है; कोटि कोटि तिग्मरश्मि से अधिक तेजोपुंज है, प्रबल प्रभंजनों से अतिशय बलशाली है। वहाँ न शान्ति का निठाला है, न पाप का मसाला है, अपितु आत्यन्तिक सुख का बोलबाला है। संसार में ढाई अक्षर प्रेम के पढ़नेवाले ही पण्डित माने गये हैं। प्रेम क्या वस्तु है, यह कोई बता नहीं सकता। इस अनिर्वचनीय सुख को कोई जता भी नहीं सकता। प्रेम मानवधर्म बनकर उत्सर्ग के रूप में प्रबल पुरुषार्थ धारण कर लेता है। इस अखंड दीप की ज्योति को स्वार्थ का झंझावात निर्वाण नहीं कर सकता।

संसार की कोई वस्तु प्रेम के बदले में नहीं दी जा सकती। निःस्वार्थ प्रेम का अणु अणु भी मनुष्य को स्वच्छन्द सुखी और परम स्वाधीन बना सकता है। इस पवित्र प्रेम के अभाव में सुर-पति पुरन्दर भी दीन मलीन बन जाता है।

आज गिरधारीलाल की बारात की विदाई का आयोजन हो रहा है। सब बाराती एवम् कन्या पक्ष के लोग आंगन में कुर्सियों पर बैठे हैं। बड़े सुन्दर ढंग से सबका परस्पर परिचय कराया जारहा है। बरात में कुछ कवि हैं। जो अपनी कविता में बारात के स्वागत का वर्णन करते हैं। सर्वप्रथम श्रीधर कवि उठते हैं।

प्रीत. सन् अहम्-हार्दिक साधुवादम् उपहरामि।

विजयन्ताम् विजयताम्

सुरभारती।

ॐ हरि शरणम्। शाति शाति शांति.।

(पटाक्षेप)



तृतीय दृश्य

स्थान—जयशंकर का गृह प्राङ्गण

समय—अपराह्न काल

प्रेम दीपक जिस मानसभवन में प्रकाशित है; वह कोटि कन्दर्प से अधिक लावण्यमय है, सहस्र शशाङ्को से अधिक सुशीतल है; कोटि कोटि तिग्मरश्मि से अधिक तेजोपुंज है, प्रवल प्रभंजनो से अतिशय बलशाली है। वहाँ न शान्ति का सिंहासन है, न पाप का मसाला है, अपितु आत्यन्तिक सुख का बोलबाला है। संसार में ढाई अक्षर प्रेम के पढ़नेवाले ही पण्डित माने गये है। प्रेम क्या वस्तु है, यह कोई बता नहीं सकता। इस अनिर्वचनीय सुख को कोई जता भी नहीं सकता। प्रेम मानवधर्म बनकर उत्सर्ग के रूप में प्रवल पुरुषार्थ धारण कर लेता है। इस अखंड दीप की ज्योति को स्वार्थ का झंझावात निर्वाण नहीं कर सकता।

संसार की कोई वस्तु प्रेम के बदले में नहीं दी जा सकती। निःस्वार्थ प्रेम का अणु अणु भी मनुष्य को स्वच्छन्द सुखी और परम स्वाधीन बना सकता है। इस पवित्र प्रेम के अभाव में सुरपति पुरन्दर भी दीन मलीन बन जाता है।

आज गिरधारीलाल की बारात की विदाई का आयोजन हो रहा है। सब बाराती एवम् कन्या पक्ष के लोग आंगन में कुर्सियों पर बैठे हैं। बड़े सुन्दर ढंग से सबका परस्पर परिचय कराया जारहा है। बरात में कुछ कवि हैं। जो अपनी कविता में बारात के स्वागत का वर्णन करते हैं। सर्वप्रथम श्रीधर कवि उठते हैं।

श्रीधर— (स्थान के सम्बन्ध में)

(१)

थी धूप कडी, जहाँ रेल खड़ी,
फिर भी सब स्वागत को आये।
ऊँच नीच का भेद न था,
सब प्रेम सुधा लेकर धाये।
स्थान की शोभा देख दग,
क्या विश्वकर्मा को ले आये ?
नल नील से दो मैनेजर हैं,
पानी में पत्थर तैराये।

(२)

यद्यपि मैनेजर नाटे हैं,
पर काम सभी चतुराई को।
इच्छा अनुगामी रहो सदा,
चाकर को हुकम कड़ाई को।
सब साधन सम्मुख लाय रखे,
यद्यपि है समय मँहगाई को।
कहने की दिल में चाह बहुत,
पर नाहीं समय बड़ाई को।

(करतलध्वनि में श्रीधर कवि बैठते हैं, और श्रीगोपाल कविता में "भोजन बहार" का वर्णन करने को खड़े होते हैं)

(१)

श्रीगोपाल— पाटो पर मिल्वर थाल धरैं,
और दाल पै भात परोसन लागे।
तनमन की सुध नाहीं रही अरु,
डबल भात सब लेवन लागे।
"कट" को झट सबने साफ कियो,
फिर कट कट शोर मचावन लागे।
पापड़ को वेलिवो सुन्दर है,
सब धन्य सगीजी बोलन लागे।

× × × ×

कामिनी नित शृङ्गार करैं,
पर एकसो वेश बनावैं ना।
नित को मिलवो भी हितकर है,
पर मन उमङ्ग दरसावैं ना।
नित की एक ताल बजै नाहीं,
नित को एक राग सुहावै ना।
दाल भात में घी पर घी,
नित को यह भोजन भावै ना।

(श्री गोपाल स्वस्थान पर बैठते हैं। कवि मुकुन्द विनम्र खादी प्रेमी सादगीप्रिय जयशङ्कर जी की सिगरेट प्रियता पर आश्चर्य प्रकट करते हैं, और प्रीतिभोजन पर भी प्रकाश डालते हैं।

कवि मुकुन्द —

१

मान से ना कछु प्रेम कियो,
अभिमान से भी ना प्रेम कियो।
ना प्रेम कियो कटुवाक्यों में,
ना ईर्ष्या द्वेष से प्रेम कियो।
ना प्रेम कियो कोई फैशन से,
ना काले बूट से प्रेम कियो।
मन माने नाहीं बिना पूछे ?
"सिगरेट" से क्यों अति प्रेम कियो।

२

—प्रीति भोजन वर्णन—

पिश्तो की बरफी काली थी,
घेवर में घाव घनेरे थे।
नुकती तो बिखरी जाती थी,
बरफी के तार तनेरे थे।
पूडी उपमी कुछ ज्यादा थी,
सागों के नाम अनेकों थे।
चटनी दही बड़े नरम पापड़,
अतृप्त भाव रसिकों के थे।

(कवि मुकुन्द बैठते हैं और कन्या पक्ष की तरफ से कवि विनोद बारातिया के सौजन्य का वर्णन करते हैं।)

कवि विनोद —

१

कहीं माग बड़ी, कहीं लाग बडी,
कहीं टाग बडी है बरातिन की।
कहीं आंख बड़ी, कहीं नाक बडी,
कहीं ताक बड़ी है बरातिन की।

कहीं पेट बड़ो, कहीं कोट बड़ो,
कहीं टोपी बड़ी है वरातिन की।
कहनो सुननो हिलमिल रहनो,
अरु जात बड़ी है वरातिन की।

(२)

"चाइनी" चिपटी है नाक कहीं,
कोई अफ्रीकन से काले है।
जापानी सा आकार कहीं,
कोई मिस्र मदन मतवाले है।
अमरिकन से कोई लाल लाल,
कोई फ्रेञ्च मूँछ कटवाले हैं।
सब शारद के बेटे पोते,
प्रगती पथ के उजियाले हैं।

(जोर से सभी सज्जन हँसने लगते हैं। उसी समय कन्यापक्ष से सुन्दर दहेज की सामग्री सबके सम्मुख रखी जाती है। जिसमें खादी के केशरिया सुन्दर वस्त्र, सुन्दर साधारण आभूषण, नित के व्यवहार की कई वस्तुए हैं। सादगी की यह पवित्र आकर्षक झाँकी देख कर सारे बाराती मुक्तकंठ से पवित्र दहेज की प्रशंसा करने लग जाते हैं और प्राचीन संस्कृति के आदर्श की चारों ओर बखान होने लगती है। वर के पिता इस सुन्दर दहेज को प्राप्त कर फूले नहीं समाते। देश में इस सुन्दर प्रथा की अत्यन्त आवश्यकता है—ये विचार उन्हें बार बार स्मरण होने लगते हैं, वे जयशंकर की सादगी पर मुग्ध हो जाते हैं, और बड़ी स्नेह भरी दृष्टि से

कवि मुकुन्द —

१

मान से ना कछु प्रेम कियो,
अभिमान से भी ना प्रेम कियो।
ना प्रेम कियो कटुवाक्यों में
ना ईर्ष्या द्वेष से प्रेम कियो।
ना प्रेम कियो कोई फैशन से,
ना काले बूट से प्रेम कियो।
मन माने नाहीं बिना पूछे ?
"सिगरेट" से क्यों अति प्रेम कियो।

२

—प्रीति भोजन वर्णन—

पिश्तो की बरफी काली थी,
घेवर में घास बनेरे थे।
नुकती तो बिखरी जाती थी,
बरफी के तार तनेरे थे।
पूड़ी उपमी कुछ ज्यादा थी,
सागों के नाम अनेकों थे।
चटनी दही बड़े नरम पाउ,
अतृप्त भाव रसिकों के थे।

(कवि मुकुन्द बैठते हैं और कन्या पक्ष की तरफ से कवि विनोद बारातियों के सौजन्य का वर्णन करते हैं।)

कवि विनोद —

१

कहीं माग बड़ी, कहीं लाग बड़ी,
कहीं टाग बड़ी है बरातिन की।
कहीं आँख बड़ी, कहीं नाक बड़ी,
कहीं ताक बड़ी है बरातिन की।

कहीं पेट बड़ो, कहीं कोट बड़ो,
कहीं टोपी बड़ी है बरातिन की।
कहनो सुननो हिलमिल रहनो,
अरु जात बड़ी है बरातिन की।

(२)

"चाइनी" चिपटी है नाक कहीं,
कोई अफ्रीकन से काले हैं।
जापानी सा आकार कहीं,
कोई मिस्र मदन मतवाले हैं।
अमरिकन से कोई लाल लाल,
कोई फ्रेञ्च मूँछ कटवाले हैं।
सब शारद के बेटे पोते,
प्रगती पथ के उजियाले हैं।

(जोर से सभी सज्जन हँसने लगते हैं। उसी समय कन्यापक्ष से सुन्दर दहेज की सामग्री सबके सम्मुख रखी जाती है। जिसमे खादी के केशरिया सुन्दर वस्त्र, सुन्दर साधारण आभूषण, नित के व्यवहार की कई वस्तुएं हैं। सादगी की यह पवित्र आकर्षक झाँकी देख कर सारे बाराती मुक्तकंठ से पवित्र दहेज की प्रशंसा करने लग जाते हैं, और प्राचीन संस्कृति के आदर्श की चारों ओर बखान होने लगता है। वर के पिता इस सुन्दर दहेज को प्राप्त कर फूले नही समाते। देश मे इस सुन्दर प्रथा की अत्यन्त आवश्यकता है—ये विचार उन्हे बार बार स्मरण होने लगते हैं, वे जयशंकर की सादगी पर मुग्ध हो जाते हैं, और बड़ी स्नेह भरी दृष्टि से

उनकी ओर देखने लगते हैं)

जयशंकर—(करबद्ध निवेदन करते हुए) आज मैं अपने को परम भाग्यशाली और धन्य समझता हूं, कि आप सब महानुभावों ने मेरी तुच्छ सेवा का जो मान, जर जरण को मेवमाला मानकर जो अवर्णनीय अनुग्रह किया—वह कभी भुलाने पर भी नहीं भुलाया जासकता। हमलोगों के भाव कानन में आपलोगों ने पारिजात बनकर सर्वत्र सौरभ का प्रसार किया। त्रुटियों से चिन्तित हमलोगों के मरुमानस में देवापगा का परम पावन प्रवाह प्रवाहित कर हम सब को कृतार्थ किया। परिस्थितियों से आक्रान्तों के लिए अमीजीवन मूरी बन कर नवजीवन का सञ्चार किया। आपलोगों ने पारसस्वभाव से सब को कांचन कर दिया। पावकसमान तेजपुंज बनकर सब के त्रुटि तृणों को भस्म करदिया। आपके पवित्र एवम् उदार विचार समाज के रूढि विषाद को दूर करने में समर्थ हैं। मानव देवमन्दिर में आपके पुनीत कार्य परम प्रेम की मूर्ति की प्रतिष्ठा करते हैं। आपलोगों की सेवा का सौभाग्य प्राप्त कर हमलोगों का जीवन सफल प्रशंसित एवम् धन्य है।

(जयशंकर के विनम्र निवेदन से सब प्रेम विह्वल होजाते हैं। श्री अमोलकचंद प्रत्यभिनन्दन के लिए खडे होते हैं)

अमोलकचन्द—किसी ने सच कहा है, प्रेम की प्यास कभी नहीं बुझती। प्रेम की अद्भुत डोरी ज्यों लम्बी होती है, बढती चली जाती है। हम बरातियों की तरफ से सभी स्वागत करने वालों का विनम्रता पूर्णकार्य का जितना भी गुणगान करें थोड़ा है।

आज हमलोगों को क्या नहीं प्राप्त हुआ?

रत्नाकर से लक्ष्मी प्राप्त हुई ।

पृथ्वी से जानकी मिली ।

हिमालय से पार्वती की प्राप्ति हुई ।

आपलोगों के साथ रह कर सभाषण कर हमलोगो ने सामन्त-शाही आडम्बर युक्त कपट आचरणों का बहिष्कार करते हुए शान्ति सदाचार—सादगी का व्यवहार करना सीखा ।

समाज की विकृत रूढ़ियों का तिरस्कार करते हुए मानव समाज में पवित्र प्रेम का प्याला पीना और पिलाना सीखा ।

स्वार्थ की लालसा से हजारो कोश दूर रहकर विछुड़े बन्धुओं को गले लगाना और आदर देना सीखा ।

रग विरगे कुसुमो के नवरगो की तरफ अवलोकन न करते हुए उनकी सुन्दर सुखद सुगन्धित सौरभ को सूँघना और मोद भरना सीखा ।

शत शत शताब्दियों से उपेक्षित रत्नगर्भा वसुन्धरा की अन-मोल मणियों को समझना और परखना सीखा ।

आपकी स्वागत की तैयारियो में दिव्य अमरावती का देदीप्य-मान प्रकाश देखा ।

एकत्र सस्थापित सामग्री रूपी वाटिका में सद्व्यवहार सुमनराज गुलाब का मधुर पराग देखा ।

सारी व्यवस्था में मलयाचल रमणीय मनोमुग्धकारिणी छटा का आभास देखा ।

हमें आपने अपने सज्जन हृदय करुणामय भवन में आवास दिया, जहाँ चैतन्य पवन रूप में शीतल मद सुगन्ध बनकर सेवा करता

उनकी ओर देखने लगते है)

जयशंकर—(करबद्ध निवेदन करते हुए) आज मैं अपने को परम भाग्यशाली और धन्य समझता हू, कि आप सब महानुभावो ने मेरी तुच्छ सेवा का जो मान, जल कण को मेघमाला मानकर जो अवर्णनीय अनुग्रह किया—वह कभी भुलाने पर भी नही भुलाया जासकता। हमलोगो के भाव कानन मे आपलोगो ने पारिजात बनकर सर्वत्र सौरभ का प्रसार किया। त्रुटियो से चिन्तित हमलोगो के मरुमानस में देवापगा का परम पावन प्रवाह प्रवाहित कर हम सब को कृतार्थ किया। परिस्थितियो ने आक्रान्तो के लिए अमीजीवन मूरी बन कर नवजीवन का सचार किया। आपलोगो ने पारसस्वभाव से सब को कांचन कर दिया। पावकसमान तेजपुंज बनकर सब के त्रुटि तृणो को भस्म करदिया। आपके पवित्र एवम् उदार विचार समाज के रूढि विषाद को दूर करने मे समर्थ है। मानव देवमन्दिर में आपके पुनीत कार्य परम प्रेम की मूर्ति की प्रतिष्ठा करते है। आपलोगो की सेवा का सौभाग्य प्राप्त कर हमलोगो का जीवन सफल प्रशमित एवम् धन्य है।

(जयशंकर के विनम्र निवेदन से सब प्रेम विह्वल होजाते हैं। श्री अमोलकचंद प्रत्यभिनन्दन के लिए खडे होते है)

अमोलकचन्द—किसी ने सच कहा है, प्रेम की प्यास कभी नहीं बुझती। प्रेम की अद्भुत डोरी ज्यो लम्बी होती है, बढती चली जाती है। हम बरातियो की तरफ से सभी स्वागत करने वालो का विनम्रता पूर्णकार्य का जितना भी गुणगान करे थोडा है।

आज हमलोगो को क्या नहीं प्राप्त हुआ ?

रत्नाकर से लक्ष्मी प्राप्त हुई।

पृथ्वी से जानकी मिली।

हिमालय से पार्वती की प्राप्ति हुई।

आपलोगों के साथ रह कर सभाषण कर हमलोगो ने सामन्तशाही आडम्बर शुष्क कपट आचरणों का बहिष्कार करते हुए शान्ति सदाचार—सादगी का व्यवहार करना सीखा।

समाज की विकृत रूढ़ियो का तिरस्कार करते हुए मानव समाज में पवित्र प्रेम का प्याला पीना और पिलाना सीखा।

स्वार्थ की लालसा से हजारो कोश दूर रहकर बिछुडे बन्धुओं को गले लगाना और आदर देना सीखा।

रग बिरगे कुसुमो के नवरगो की तरफ अवलोकन न करते हुए उनकी सुन्दर सुखद सुगन्धित सौरभ को सूँघना और मोद भरना सीखा।

शत शत शताब्दियों से उपेक्षित रत्नगर्भा वसुन्धरा की अनमोल मणियों को समझना और परखना सीखा।

आपकी स्वागत की तैयारियों मे दिव्य अमरावती का देदीप्यमान प्रकाश देखा।

एकत्र सस्थापित सामग्री रूपी वाटिका में सद्व्यवहार सुमनराज गुलाब का मधुर पराग देखा।

सारी व्यवस्था में मलयाचल रमणीय मनोमुग्धकारिणी छटा का आभास देखा।

हमें आपने अपने सज्जन हृदय करुणामय भवन में आवास दिया, जहाँ बेतर पवन रूप में शीतल मद सुगन्ध बनकर सेवा करता

रहा। मनकी उमग ज्योति सूर्यसम सदैव हमे प्रकाश देती रही।

प्रेम के व्यवहार की शीतल छाया के विश्राम की स्मृति आज भी हमलोगों के हृदय में एक नव उमग उत्पन्न कर रही है।

आज वधूरत्न प्राप्त कर हम लोग अपने को सर्वसम्पन्न परम प्रसन्न एवम् भाग्यशाली समझते हैं।

कल्पद्रुम· कल्पितमेव सूते,
सा कामधुक्कामितमेव दोग्धि।
चिन्तामणिश्चिन्तितमेवदत्ते,
सतां हि संग सकल प्रसूते॥

(कल्पवृक्ष केवल कल्पित वस्तुएँ ही देता है, कामधेनु केवल इच्छित भोग ही प्रदान करती है। तथा चिन्तामणि भी चिन्तित पदार्थ ही देती है, किन्तु सत्पुरुषों का संग सभी इच्छाएँ परिपूर्ण करता है।)

जयतु जयतु भारतीया संस्कृति।

(पटाक्षेप)



श्री गणेशायनम

सरस्वती सदन बीकानेर की प्रकाशित पुस्तकें अवश्य पढ़ें ।

१ "पुष्पाञ्जलि" (सप्त एकाङ्की नाटक संग्रह)

प्रणेता—श्री विट्ठलदास कोठारी

२ "वैजयन्ती" (कविता संग्रह)

प्रणेता—श्री आचार्य "चन्द्रमौलि"

३ "दहेज" (तीन एकाङ्की नाटक संग्रह)

प्रणेता—श्री विट्ठलदास कोठारी

"पुष्पाञ्जलि" पर प्रशस्तियाँ

(१) राष्ट्र कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त नई दिल्ली से लिखते हैं—

'पुष्पाञ्जलि" के लिए बहुत धन्यवाद। आँखों के कष्ट के कारण इधर मैं थोड़ा ही लिख पढ़ पाता हू। फिर भी आपकी रचना रचनात्मक लगती है। मैं आपकी उत्तरोत्तर उन्नति की कामना करता हूँ।"

(२) श्री के. माधव कृष्ण शर्मा M O L निरीक्षक संस्कृत पाठशालाएँ राजस्थान एवं अध्यक्ष महाराजा संस्कृत कॉलेज जयपुर से लिखते हैं—

आपके द्वारा भेजी गई "पुष्पाञ्जलि" नामक पुस्तक जिसमें सात एकाङ्की नाटकों का सग्रह है, प्राप्त हुई। इस प्रकार के शिक्षाप्रद एकाङ्की नाटकों का प्रकाशन हिन्दी जगत के लिए अपूर्व देन है। लेखक की भारतीय सँस्कृति मे सुधारवादिता की प्रवृत्ति तथा पौराणिक अध्ययन व धर्मशास्त्र के ज्ञान का परिचय मिलता है जो सराहनीय है।

सँस्कृत का अन्तिम एकाङ्की नाटक सबसे सुन्दर है। जिसमें सँस्कृत को सर्वसाधारण के द्वारा सरलता पूर्वक समझने योग्य बनाने का अनुपम प्रयास किया गया है। भाषा की सुन्दरता व श्रेष्ठता तथा शब्दों की योजना शोभनीय है। मैं सर्वदा इस प्रकार के नवचेतनामय प्रकाशन प्रयास के उत्तरोत्तर उन्नति के पथ पर अग्रसर होने की कामना करता हूँ।

(३) श्री धन्नूलाल जी शर्मा B L. Attorney-at Law Calcutta से लिखते हैं--

"यह कृति उच्च भावनाओं से परिपूर्ण तथा बड़े ही सुन्दर ढ़ग से प्रस्तुत की गयी है। जिस समय में 'सती" का परिच्छेद पढ़ रहा था उस समय मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा था कि मानों उपन्यास सम्राट् कहे जाने वाले प्रेमचन्द की कहानी पढ़ रहा हू। परन्तु फिर शीघ्र ही मुझे स्मरण आया कि प्रेमचन्द को भाषा इतनी प्राञ्जल नहीं है और न भावनाएँ ही इतनी सुन्दर हैं जो मै पढ़ रहा हूँ। आप ऐसे युवको को साहित्य क्षेत्र में अवतीर्ण हो देश, और जाति के अभ्युत्थान में सहायक होने वाली भावनाओं का प्रचुर प्रचार करना चाहिये।

(४) श्री विद्याधर शास्त्री एम. ए. प्रो० डूँगर कॉलेज बीकानेर से लिखते हैं--

श्री विट्ठलदास जी कोठारी बीकानेर के सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्र में अपनी समाज सेवा, ओजस्वितापूर्ण व्याख्यान शक्ति के लिए सदा से ही प्रसिद्ध रहे है।

पुष्पाञ्जलि के ७ एकाङ्की नाटकों में अब आपने अपनी परिष्कृत लेखन शक्ति का भी परिचय दिया है। इन नाटकों में जिन विषयों को चुना गया है। वे हमारे शिक्षा ससार और हमारी सामाजिक प्रवृत्तियो पर लेखक के दार्शनिक एव व्यावहारिक अनुभवो से सम्पन्न अनेक सुन्दर समाधानो को उपस्थित करते हैं। भाषा ओजस्विनी और आकर्षक है। अनेक स्थलो में "विनोदशीला हि मन प्रवृत्ति" के साथ कुछ नवीन शैलियो को भी अपनाया गया है।

अन्त में सत्याग्रह के रूप में जिस भक्तिप्रधान रूपक की सस्कृत में रचना की गयी है वह परम सुन्दर है। पुष्पाञ्जलि के सब पुष्प सुगन्धित एव मनोमोहक हैं। इन नाटकों के निर्माण के लिए कोठारी जी को हार्दिक बधाई।

(५) श्री विजय कुमार Bank house, Bombay No. 2 से लिखते हैं—

"पुष्पाञ्जलि" ने आपको अमर बना दिया है। सबसे बडी विशेषता तो यह है कि इसके सवाद बडे ही स्वादु और भावनापूर्ण हैं। साथ ही साथ शुद्ध साहित्यिक होकर भारतीय संस्कृति को पूर्ण रूप से चखने का जो आनन्द प्रदान करते हैं, वे सराहनीय ही नहीं, अपितु हिन्दी कोष की एक महानिधि भी हैं। मैं हार्दिक धन्यवाद तो क्या? जो भी पुष्पाञ्जलि के ससर्ग में आयेगा बिना आपको दाद दिये अपने आपको नहीं रोक सकेगा। अभी तक "पुष्पाञ्जलि" मेरे मित्रो के बीच घूम रही है। सबों ने उसे बहुत पसन्द किया है।

(६) श्री सोमेश्वरानन्द जी भारती अध्यक्ष पंच मन्दिर बीकानेर से लिखते हैं।

"पुष्पाञ्जलि में लेखक का विचार प्रतिबिम्बित हुआ है। सवाद द्वारा गहन विषयो को भी समझा दिया गया है।

वैजयन्ती का अभिनन्दन

नव्य व्याकरणाचार्य श्री काशीनाथ पाण्डेय "आचार्य चन्द्रमौलिजी" की वैजयन्ती नामक काव्यपुस्तिका की मधुर सरस तथा भावमयी कविताओं का रसास्वादन करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। संस्कृत के प्रौढ़ पंडित होने के कारण इनकी रचनाओ मे भावगाम्भीर्य और पदलालित्य दोनों का उचित सन्निवेश हो सका है। "गीतो मे कवि की अपनी अनुभूति और अपनी भावनाओ का अभिव्यजन जितना व्यापक और पूर्ण होता है, उतना ही उसका काव्य सर्वहृदयग्राही होता है"। "आचार्य चन्द्रमौलि" के गीतो में भावमय हृदय संस्पर्श की जितनी क्षमता है, उतनी साधारण हिन्दी कवियो की रचनाओ में प्राप्त नहीं होती।

"विप्लव" मे जिस कल्याणकारिणी क्रान्ति की कल्पना की गई है वह आगे रचनात्मिका प्रकृति का निर्देश करती हुई "करो मरो" और "चला चक्र है" मे अपनी सावयव मुद्रा मे विस्फुरित हो गई है और फिर "बेशक तूफान मचा देंगे" मे कुछ स्वर खोलकर मुखरित हो उठी है। आगे चल कर "पूजागीत" तथा "आनन्द सिन्धु" मे कवि की अन्त प्रतिभा और आनन्द-वृत्ति कुछ दार्शनिक भावुकता के साथ मुखरित हुई है। इस प्रकार गीत के दोनो पक्ष अन्त.प्रेरणात्मक और बाह्य प्रभावात्मक दोनो का चमत्कार इनकी रचनाओं मे एक साथ प्राप्त हो जाता है।

हिन्दी साहित्य के विशाल और प्रशस्त क्षेत्र मे मैं वैजयन्ती का अभिनन्दन करता हूं और आशा करता हूं कि यह हिन्दी साहित्य की वैजयन्ती बन जायगी।

६३/४३ उत्तर बेनिया बाग
काशी

साहित्याचार्य
पं. सीताराम चतुर्वेदी एम. ए.
(हिन्दी, संस्कृत, पाली, प्राचीनभारतीय इतिहास तथा संस्कृति) बी. टी. एल. एल. बी.

१४–६–५४

"पुष्पाञ्जलि" पर पत्रों की समालोचनाएँ

लेखक—विट्ठलदास कोठारी, पृष्ठ २०३ सजिल्द, मूल्य २)

"साहित्य सन्देश" आगरा —

"पुष्पाञ्जलि" के सातों एकाङ्की नाटक धार्मिक एवं सांस्कृतिक भावना से अनुप्राणित हैं ; और इसका नैतिकस्तर बहुत ऊँचा है। ये नाटक सवादात्मक हैं, तथापि विचारपूर्ण हैं। पुस्तक नैतिक भावनाओ के प्रचार के लिए उपयोगी सिद्ध होगी। जो लोग भारतीय सस्कृति और सस्कृत भाषा के प्रेमी हैं, उनको यह सग्रह अवश्य रुचिकर होगा।

"राजस्थान भारती" बीकानेरः—

"पुष्पाञ्जलि" एक अत्यन्त सुन्दर रचना है, जो पाश्चात्य तथा पौरस्त्य आधुनिक और प्राचीन विचारों का तुलनात्मक अध्ययन करवाकर खरे खोटे को परखने की प्रेरणा प्रदान करती है। मानव क्या है? विचारपुञ्ज। आजकल चतुर्दिक् दु ख द्वेष, दारिद्र्य की ज्वालाएँ प्रज्वलित होरही हैं। लेखक ने आधुनिक मानव के मन को आलोडित तथा विपाक्त करनेवाले विचारसघर्षों का शास्त्र, तर्क, तथा युक्तिपूर्वक मथन करके परिणाम में नवनीत समुपस्थित करदिया है। स्वतन्त्र भारत की रमणी कैसी होनी चाहिये? उसको अपने सन्मुख क्या आदर्श रखना चाहिये? वह "विलसिता की चेरी" "त्याग भावना शून्य" तथा अधिकार चाहनेवाली होनी चाहिये अथवा "त्यागमूर्ति" "परिश्रमी" विदुषी एव गृहस्थ को सुचारु रूप से चलाने वाली होनी चाहिये? लेखक ने इन पर प्रकाश डालते हुए लक्ष्य की ओर निर्देश किया है।

आजादी का वास्तविक स्वरूप "विवाह का रहस्य" पार्टीबन्दी की सड़ान्द के कुपरिणाम "आज की शिक्षा के ध्येय केवल कागजी पहलवान तैयार करना" विद्यार्थियों का बिगाड़, उनका मिथ्याचार, आहार, विहार, अनुशासनहीनता, आलस्य, प्रमाद, अहम्मन्यता, के सप्तसिन्धु में गिरकर समाज काल मकर की आहार सामग्री बनना" आदि विषयो पर कथोपकथन के रूप में बहुत सूक्ष्म छानबीन द्वारा जनहितकारी परिष्कृत विचार रखे हैं, जिनसे समाज और विशेषतया विद्यार्थियों का महान हित होगा।

जय हिन्दी

सरस्वती सदन (आनन्द भवन) प्रकाशन बीकानेर की सस्ती सुन्दर उपादेय पुस्तकों को खरीद कर राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा देशसेवा के पुनीत महासत्र में अवश्य सहयोग प्रदान करें।

हिन्दी सेवी संसार को सामयिक सुलभ मौलिक सत्साहित्य समर्पण के उद्देश्य से सरस्वती सदन बीकानेर की स्थापना की गई है, जिसके द्वारा निम्नलिखित समाजोपयोगी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं, जिनपर अनेक प्रख्यात पत्र पत्रिकाओं, हिन्दी साहित्यसेवी विशिष्ट विद्वानों, निष्पक्ष समालोचकों एवं प्रगतिशील पाठकों की प्रशस्तियाँ तथा समालोचनाएँ उपलब्ध हैं।

(१) "पुष्पाञ्जलि" (संवादात्मक सप्त एकाङ्की नाटक संग्रह) मू० २)

प्रणेता— विट्ठलदास कोठारी

(२) "वैजयन्ती" (क्रान्तिकारिणी कविता संग्रह) मू० २)

लेखक— आचार्य "चन्द्रमौलि"

(३) "दहेज" (संवादात्मक तीन एकाङ्की नाटक संग्रह) मू० २)

नाटककार— विट्ठलदास कोठारी

(४) समर्पण— (यन्त्रस्थ) लेखक— विट्ठलदास कोठारी

(५) धर्म विज्ञान— (यन्त्रस्थ) लेखक— पं० ईश्वरानन्द शास्त्री

सदन की पुस्तकें मँगाने वाले सज्जनों को २५% कमीशन दिया जाता। तीन से अधिक पुस्तकें मँगाने पर डाक व्यय नहीं किया जाता है।

पं० ईश्वरानन्द शास्त्री
मंत्री
सरस्वती सदन द्वारा आनन्द भवन
रानीबाजार, बीकानेर